खंड

2

रघुवंशम्

इकाई 5

रघुवंशम् महाकाव्य का परिचय 65

इकाई 6

रघुवंशम् (प्रथम सर्ग) श्लोक 1-10 86

इकाई 7

रघुवंशम् (प्रथम सर्ग) श्लोक 11-25 100

खंड परिचय

'संस्कृत पद्य-साहित्य' पाठ्यक्रम का यह द्वितीय खण्ड आपके लिए प्रस्तुत है। इस खंड में 3 इकाइयाँ हैं। इस खंड की सभी इकाइयाँ महाकवि कालिदास विरचित 'रघुवंश' महाकाव्य पर केन्द्रित हैं। महाकवि कालिदास का संस्कृत साहित्य में मूर्धन्य स्थान है। उनके द्वारा विरचित 'रघुवंश' महाकाव्य की गणना बृहत्त्रयी के अन्तर्गत की जाती है। इस खंड में आप महाकवि कालिदास के संक्षिप्त परिचय के साथ 'रघुवंश' महाकाव्य का परिचय प्राप्त करेंगे। इस महाकाव्य में महाकवि कालिदास ने 19 सर्गों में रघुवंशी 31 राजाओं का वर्णन किया है। आप रघुवंश महाकाव्य के कथासार तथा प्रमुख पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं से परिचित होंगे। इसके साथ ही आप रघुवंश महाकाव्य के प्रथम सर्ग के प्रारम्भिक 25 श्लोकों का अन्वय, अनुवाद एवं व्याख्या का अध्ययन करेंगे।

तकनीकी और कठिन शब्दों को स्पष्ट करने के लिये प्रत्येक इकाई में आवश्यक शब्दावली दी गयी है। साथ ही अध्ययन में सहायक उपयोगी पुस्तकों की सूची प्रत्येक इकाई के अन्त में दी गयी है। इन पुस्तकों के सहयोग से आप सम्बन्धित विषय का और अधिक अध्ययन कर सकते हैं।

शुभकामनाओं के साथ

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 5 रघुवंशम् महाकाव्य का परिचय

इकाई की रूपरेखा

5.0 उद्देश्य

5.1 प्रस्तावना

5.2 महाकवि कालिदास का परिचय

5.2.1 महाकवि कालिदास का जन्मस्थान

5.2.2 महाकवि कालिदास की प्रशस्तियाँ

5.2.3 महाकवि कालिदास का वैशिष्ट्य

5.3 रघुवंश महाकाव्य का परिचय

5.3.1 रघुवंश महाकाव्य नाम की सार्थकता तथा रघुवंश की वंश परम्परा

5.3.2 रघुवंश की प्रमुख सूक्तियाँ

5.3.3 रघुवंश का कथा-सार

5.4 रघुवंश महाकाव्य के प्रमुख पात्रों का चरित्र-चित्रण

5.4.1 राजा रघु का चरित्र-चित्रण

5.4.2 राजा दिलीप का चरित्र-चित्रण

5.4.3 राजा राम का चरित्र-चित्रण

5.4.4 राजा अज का चरित्र-चित्रण

5.4.5 सीता का चरित्र-चित्रण

5.4.6 इन्दुमती का चरित्र-चित्रण

5.4.7 सुदक्षिणा का चरित्र-चित्रण

5.5 सारांश

5.6 शब्दावली

5.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें

5.8 बोध/अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

5.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के अध्ययन से आप –

- महाकवि कालिदास के विषय में सामान्य जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- रघुवंश महाकाव्य के विषय में सामान्य जानकारी प्राप्त कर सकेंगे।
- रघुवंश के प्रमुख चरित्रों का परिचय प्राप्त कर सकेंगे।
- श्री राम के आदर्श चरित्र को जान पायेंगे।
- गौ सेवा के महत्त्व को जान सकेंगे।
- इक्ष्वाकुवंश के प्रमुख राजाओं का परिचय प्राप्त कर सकेंगे।

5.1 प्रस्तावना

संस्कृत साहित्य को मुख्यतया दो भागों में विभाजित किया गया है– (1) वैदिक साहित्य (2) लौकिक साहित्य। वैदिक साहित्य में वेद, वेदांग, उपनिषद्, पुराण, ब्राह्मण, आरण्यक आदि

परिगणित होते हैं तथा लौकिक साहित्य का प्रारम्भ आदिकवि वाल्मीकि रचित रामायण तथा महर्षि वेदव्यास लिखित महाभारत से माना जाता है। अद्यावधि ये दोनों रचनाऐं भारतीय संस्कृति की आदर्शभूत रही हैं। इनका कथानक, शैली तथा काव्य की दृष्टि से इनका रचना संसार इतना व्यापक है कि इनसे प्रेरणा लेकर सैकड़ों परवर्ती रचनाकारों ने अपने काव्य तथा साहित्य की रचना की तथा आज भी कर रहे हैं। वाल्मीकि और व्यास के बाद अपने साहित्य से भारतीय ज्ञानराशि को समृद्ध करने वाले कृतिकारों में कालिदास अनन्य हैं। इस इकाई में हम कालिदास रचित रघुवंश महाकाव्य के विषय में अध्ययन करेंगे।

5.2 महाकवि कालिदास का परिचय

कविकुलगुरु कालिदास के जीवन के सम्बन्ध में प्रामाणिक रूप से कुछ कहा नहीं जा सकता। कालिदास के वंश, माता-पिता, शिक्षा, गार्हस्थ जीवन तथा उनकी जन्मभूमि आदि के विषय में कोई साक्ष्य कालिदास के काव्यों में नहीं मिलता है। जनश्रुतियों के आधार पर परवर्ती लेखक, साहित्यकार इतिहासकार अनुमान लगाते हैं। कुछ लोग व्युत्पत्तिपरक अर्थ लगाकर कहते हैं कि कालिदास अर्थात् काली का दास, काली का सेवक।

5.2.1 महाकवि कालिदास का जन्मस्थान

महाकवि कालिदास की रचनाओं के आधार पर उनके जन्म स्थान के सम्बन्ध में चार मत प्रचलित हैं–

प्रथम मत – कालिदास ने रघुवंश में सुदक्षिणा को मागधी एवं दिलीप को मागधीपति कहकर सम्बोधित किया है। सुमित्रा को मगध की राजकन्या कहा गया है। इस मत के अनुसार कालिदास को मगध निवासी कहा गया है। जहाँ कहीं मगध देश की चर्चा आई है कालिदास का पक्षपात वहाँ दिखाई दे रहा है। इन्दुमती स्वयंवर में प्रत्याशी राजकुमारों में सबसे पहले मगधेश्वर को स्थान दिया है। रघु-दिग्विजय के प्रसंग में मगधेश्वर की हार का वर्णन कालिदास ने टाल दिया है। मगध के प्रति विशेष स्नेह दिखाने के कारण यह मत बहुतायत प्रचलित हुआ कि कालिदास मगध निवासी हैं।

द्वितीय मत – कालिदास को बंगाल का निवासी मानता है। बंगाली लोगों का यह कथन है कि कालिदास बंगाल के निवासी थे। उनका तर्क है कि धान की खेती का जितना सुन्दर वर्णन कालिदास ने अपने काव्य में किया है वो निश्चित रूप से वहीं का निवासी कर सकता है। दूसरा नाम से भी स्पष्ट है कि कालिदास बंगाल निवासी थे।

काली की पूजा विशेष रूप से बंगाल में की जाती है अतः काली का दास 'कालिदास' नाम से भी सिद्ध है कि कालिदास बंगाल के निवासी थे।

तीसरा मत – यह मत प्रो. लक्ष्मीधर कल्ला का है जो कालिदास को कश्मीर-निवासी मानते हैं। मेघदूत में यक्ष का सन्देश लेकर मेघ उत्तर दिशा की ओर जाता है। भारत के नक्शे में कश्मीर की स्थिति भी उत्तर दिशा में ही है। कवि के द्वारा अत्यन्त सुन्दर रूप से वर्णित भौगोलिक स्थल कण्वाश्रम, कश्यप ऋषि का आश्रम, शचीतीर्थ, ब्रह्मसर आदि भी कश्मीर में स्थित हैं। कुछ सामाजिक रीति-रिवाजों का वर्णन कवि ने किया है जो कि कश्मीर में आज भी प्रचलित है। लोकाचार का ज्ञान उस स्थल के मूल निवासी को ही हो सकता है। अतः कश्मीर जनपद के लोग कालिदास को कश्मीर का निवासी मानते हैं।

चौथा मत – कालिदास के उज्जयिनी निवासी होने के पक्ष में है। ऋतुसंहार में मालव देश की जलवायु का वर्णन किया गया है। मेघदूत में जिन नदी, पर्वत, नगर आदि के प्राकृतिक

सौन्दर्य का वर्णन मिलता है उनमें से अधिकांश मध्य भारत से सम्बन्धित हैं। मेघदूत में यक्ष के द्वारा मेघ को कहा गया कथन इसमें प्रमाण है–

"वक्रः पन्था यदपि भवतः प्रस्थितस्योत्तराशा
सौधोत्सङ्गप्रणयविमुखो मा स्म भूरूज्जयिन्याः"

इस कथन से यह स्पष्ट है कि महाकवि का भौगोलिक ज्ञान व्यापक था किन्तु केवल भौगोलिक वर्णन के दक्ष प्रयोग से स्थाननिर्णय करना सौ प्रतिशत सत्य नहीं कहा जा सकता। तथापि कालगणनाकारों ने चमोली (गढवाल) जनपद के अन्तर्गत मन्दाकिनी के पार्श्ववर्ती सिद्धपीठ कालीमठ के निकट ग्राम कविल्ठा को कालिदास का जन्म स्थान कहा है। कालिदास को गढ़वाली लोग प्रेम से बन्दरू, कालू, कालीचरण, कालिकाप्रसाद तथा कालिकादत्त आदि नामों से पुकारते थे।

5.2.2 महाकवि कालिदास की प्रशस्तियाँ

कालिदास संस्कृत साहित्य की सर्वश्रेष्ठ विभूति हैं। कालिदास की सर्वतोमुखी प्रतिभा, उनका विशाल अनुभव संसार, उनकी भौतिकता, रचना चातुर्य, कल्पनाशीलता, प्रकृति प्रेम और प्रसादमयी वाणी पर मुग्ध होकर किसी विद्वान् ने लिखा है–

"पुरा कवीनां गणनाप्रसङ्गे कनिष्ठिकाधिष्ठितकालिदासः।
अद्यापि तत्तुल्यकवेरभावादनामिका सार्थवती बभूव"।।

बाणभट्ट ने कालिदास की प्रशस्ति में लिखा है–

"निर्गतासु न वा कस्य कालिदासस्य सूक्तिषु।
प्रीतिमधुरसान्द्रासु मंजरीष्विव जायते"।। (हर्षचरितम्–6)

जयदेव ने प्रसन्नराघवम् के प्रथम अध्याय के 22वें श्लोक में कालिदास को कविकुल का गुरू कहा है–

"कविकुलगुरुः कालिदासो विलासः"।

इसके अतिरिक्त भी अन्यान्य रचनाकारों ने कालिदास की प्रशस्ति में लिखा है–

"साकूतमधुरकोमलविलासिनीकण्ठकूजितप्राये।
शिक्षासमयेऽपि मुदे रतलीला-कालिदासोक्तिः"।।
(गोवर्धनाचार्य, आर्यासप्तशती भू. 36)

"अस्पृष्टदोषा नलिनीव ह्रष्टा, हारावलीव ग्रथिता गुणौघैः।
प्रियाङ्कपालीव प्रकामह्रद्या न कालिदासादपरस्य वाणी"।।

वैसे तो कालिदास का काव्यसौष्ठव अद्वितीय है तथापि उपमा अलंकार का वर्णन उनकी अपनी विशेषता है। अतः '**उपमा कालिदासस्य**' कालिदास के लिये कही जाने वाली प्रमुख उक्ति है।

5.2.3 महाकवि कालिदास का वैशिष्ट्य

महाकवि कालिदास के काव्य आत्मानुभूति तथा सूक्ष्म निरीक्षण पर आधारित होते हैं। उनके काव्यों में कहीं प्रकृति का मानवीकरण तथा कहीं मानव में प्रकृति की छटा का सहज तथा

जीवन्त वर्णन देखने को मिलता है। निर्जीव में सहज सजीवता को घटाना तथा सजीव में सहज निर्जीव के लक्षण घटाना कालिदास का अपना वैशिष्ट्य है।

प्रकृति वर्णन– कालिदास प्रकृति के उपासक हैं। उन्होंने प्रकृति के सुकुमार रूप को अपनी रचनाओं में प्रस्तुत किया है प्रकृति के वर्णन के लिये कालिदास ने ऋतुसंहार में सभी ऋतुओं का अलग-अलग वर्णन किया है उनकी अन्य रचनाओं में भी प्रकृति के आन्तरिक व बाह्य स्वरूप का सूक्ष्म चित्रण प्राप्त है। रघुवंश के चतुर्थ सर्ग में कालिदास राजा रघु के मुख-सौन्दर्य के वर्णन के लिये प्रकृति के प्रसिद्ध उपमान चन्द्र का आश्रय लेते हैं–

"प्रसादसुमुखे तस्मिंश्चन्द्रे च विशदप्रभे।
तदा चक्षुष्मतां प्रीतिरासीत्समरसा द्वयोः"।।(रघुवंश–4/18)

चरित्र-चित्रण– कालिदास अपने काव्यों में पात्रों को इतने आदर्श रूप में प्रस्तुत करते हैं कि जनसामान्य के लिये वे प्रेरणास्पद तथा अनुकरणीय बन जाते हैं। राजा का वर्णन जब कालिदास करते हैं तब राजोचित उत्तमोत्तम गुणों का आधान कालिदास के राजा पात्र में होता है। रघुवंश में दिलीप और रघु का आज्ञापालक एवं धर्मपरायण स्वरूप स्तुत्य है। रघुवंशी राजाओं के सफल चित्रण को देखकर ही आचार्य विश्वनाथ ने महाकाव्य के लक्षण में **"एकवंशोद्भवो भूपा कुलजा बहवोऽपि वा"** का समावेश किया।

रघुवंश में रस परिपाक– रघुवंश में यदि रघु के वर्णन को प्रमुख कथा मानकर रस का निर्णय करना हो तो वीर रस ही अंगीरस के रूप में प्राप्त है। वीर रस ही महाकाव्य में कहीं धर्मवीर, कहीं दयावीर, कहीं दानवीर और कहीं युद्धवीर के रूप में अभिव्यंजित है। नन्दिनी गौ की सेवा के प्रसंग में राजा दिलीप का वन्य सिंह के समक्ष अपने आपको समर्पित कर देना धर्मवीर तथा दयावीर का उदाहरण है

"स त्वं मदीयेन शरीरवृत्तिं देहेन निर्वर्तयितुं प्रसीद।
दिनावसानोत्सुकबालवत्सां विसृज्यतां धेनुरियं महर्षेः"।। (रघुवंश–2/45)

इन्द्र तथा रघु के युद्ध में युद्धवीर नायक अभिव्यंजित है।

"तथापि शास्त्रव्यवहारनिष्ठुरे विपक्षभावे चिरमस्य तस्थुषः।
तुतोष वीर्यातिशयेन वृत्रहा पदं हि सर्वत्रगुणैर्निधीयते"।। (रघुवंश–3/62)

"असङ्गमद्रिष्वपि सारवत्तया न मे त्वदन्येन विसोढमायुधम्।
अवेहि मां प्रीतमृते तुरंगमात्किमिच्छसीति स्फुटमाह वासवः"।।(रघुवंश–3/63)

उपमा कालिदासस्य –

वैसे तो कालिदास का अलंकार सौष्ठव अनन्य है। रस के अनुरूप उनकी रचनाओं में अलंकार स्वतः स्फुट होते हैं। कालिदास के काव्य को पढ़ते समय अलंकार कदापि ऐसे प्रतीत नहीं होते कि शोभावर्धन के लिये उन्हें बलात् प्रयोग में लाया गया है। इसमें भी उपमा का वैचित्र्य तो कालिदास के काव्य में अद्भुत है। यथा शिव और पार्वती परस्पर वाणी और अर्थ के समान संयुक्त हैं, नाम मात्र के लिये पृथक् हैं।

वागर्थाविव संपृक्तौ वागर्थप्रतिपत्तये।
जगतः पितरौ वन्दे पार्वतीपरमेश्वरौ।। (रघुवंश–1/1)

रघुवंश में नन्दिनी का अनुसरण करते हुए जब सुदक्षिणा उसके पीछे चलती है तो ऐसा प्रतीत होता है, जैसे श्रुति का अनुसरण करते हुए स्मृति चल रही है।

'श्रुतेरिवार्थं स्मृतिरन्वगच्छत्।'

जिस प्रकार पिता के घर पर न होने की दशा में पुत्र आगन्तुक अतिथियों का सम्मान करता है, ठीक उसी प्रकार ऋषि के आश्रम में न होने पर वृक्ष व लतायें अतिथि की सेवा कर रहे हैं –

'तस्यातिथीनामधुना सपर्या, स्थिता सुपुत्रेष्विव पादपेषु।। (रघुवंश–13/46)

अर्थान्तरन्यास का प्रयोग भी कालिदास के काव्यों में द्रष्टव्य है कुछ सूक्तियाँ जो अर्थान्तरन्यास के प्रयोग में प्राप्त हैं। यथा –

प्रियेषु सौभाग्यफला हि चारुता (कुमारसम्भवम् 5/1)
न धर्मवृद्धेषु वयः समीक्षते (कुमारसम्भवम् 5/16)
शरीरमाद्यं खलु धर्मसाधनम् (कुमारसम्भवम् 5/33)
न रत्नमन्विष्यति मृग्यते हि तत् (कुमारसम्भवम् 5/45)
पदं हि सर्वत्र गुणैर्निधीयते (रघुवंशम् 3/62)
तेजसां हि न वयः समीक्ष्यते (रघुवंशम् 11/1)

बोध प्रश्न 1

1. निम्नलिखित प्रश्नों में सही विकल्प का चयन कीजिये–

   i) कालिदास ने रघुवंश महाकाव्य में सुदक्षिणा को सम्बोधित किया है–

      (क) मागधी (ख) अवधी

      (ग) वैदर्भी (घ) पांचाली

   ii) कालिदास को कश्मीर का निवासी मानते हैं–

      (क) डॉ. विश्वेश्वर (ख) गणपति शास्त्री

      (ग) प्रो. लक्ष्मीधर कल्ला (घ) डॉ. रमाशंकर त्रिपाठी

   iii) 'श्रुतेरिवार्थं स्मृतिरन्वगच्छत्' सूक्ति है–

      (क) कुमारसम्भव (ख) रघुवंश

      (ग) ऋतुसंहार (घ) मेघदूत

2. कविकुलगुरु विलास किसे कहा गया है?

....

....

....

....

....

....

....

....

3. कालिदास के लिये कही जाने वाली प्रमुख उक्ति क्या है ?

....

....

....

....

....

अभ्यास प्रश्न 1

1. महाकवि कालिदास का संक्षिप्त परिचय लिखिए।
2. 'उपमा कालिदासस्य' विषय पर टिप्पणी लिखिए।

5.3 रघुवंश महाकाव्य का परिचय

रघुवंश महाकाव्य उन्नीस सर्गों में विभक्त है। इसमें 1569 श्लोक हैं। इस महाकाव्य में सूर्यवंश के 31 राजाओं के शौर्य तथा जीवन का वर्णन है। अत्यन्त प्रतापी तथा दयालु राजा मनु से लेकर परमविलासी राजा अग्निवर्ण तक की कथा रघुवंश में संकलित है। रघुवंश महाकाव्य का मूल स्रोत रामायण है किन्तु रघुवंश की कथा पद्मपुराण के अधिक समीप है। रघुवंश महाकाव्य की कथा राजा दिलीप के चरित्र-चित्रण से आरम्भ होती है। दिलीप अत्यन्त प्रतापी और पराक्रमी राजा थे किन्तु उनके कोई सन्तान नहीं थी। सन्तान प्राप्ति की कामना से वे अपनी पत्नी सुदक्षिणा के साथ गुरू वशिष्ठ के पास जाते हैं तथा गुरूप्रवर के आदेशानुसार कामधेनु की पुत्री नन्दिनी (गौ) की सेवा का व्रत लेते हैं। राजा दिलीप पत्नी सुदक्षिणा के साथ नन्दिनी की सेवा करते हुए कई महीने व्यतीत कर देते हैं एक दिन नन्दिनी राजा की परीक्षा लेने के उद्देश्य से पर्वत की कन्दराओं में प्रवेश कर जाती है और एक सिंह उस पर आक्रमण कर देता है। सिंह से गाय को बचाने के लिए राजा स्वयं अपनी देह सिंह को अर्पित कर देते हैं राजा के इस त्याग से अभिभूत होकर नन्दिनी राजा को पुत्रप्राप्ति का वरदान देती है। इसके पश्चात् राजा के पराक्रम का वर्णन, राजा दिलीप के घर रघु का जन्म आदि कथाओं से सूर्यवंश आगे बढ़ता है। अन्त में सुदर्शन के पुत्र अग्निवर्ण की कामुकता तथा विलासिता से दुःखद मृत्यु होती है। रघुवंश कालिदास की उत्कृष्ट कृति है। पद-पद पर कवि की प्रतिभा स्फुट होती है। भाव, भाषा, रस तथा कला का अनुपम उदाहरण इस महाकाव्य में द्रष्टव्य है।

5.3.1 रघुवंश महाकाव्य नाम की सार्थकता तथा रघुवंश की वंश परम्परा

रघुवंश महाकाव्य के नाम से ही स्पष्ट है कि जिस वंश में राजा रघु हुए उनके वंश का वर्णनपरक है यह महाकाव्य। प्रथम सर्ग के आरम्भ में रघुवंश नाम की सार्थकता सिद्ध करते हुए कालिदास स्वयं लिखते हैं–

"रघूणामन्वयं वक्ष्ये"

इसका व्युत्पत्तिपरक अर्थ भी स्पष्ट है– रघोः वंशः (रघु का वंश) रघूणां वंशः (रघुवंशियों का वंश), रघुवंशस्य वृत्तमस्तीत्यास्मिन् काव्ये तत् रघुवंशमिति (रघुवंश का वर्णन है जिस काव्य में वह रघुवंश महाकाव्य है), राजा दिलीप से प्रारम्भ करते हुए राजा राम का विस्तृत वर्णन है। सोलहवें सर्ग तक राम का वर्णन तथा अन्यान्य राजाओं का वर्णन संक्षेप में मिलता है। 18वें सर्ग में 21 राजाओं का उल्लेख है इस प्रकार रघुवंश मे कुल 31 राजाओं का वर्णन प्राप्त है –

(1) राजा दिलीप (2) रघु (3) अज (4)दशरथ (5) राम (6) कुश (7) अतिथि (8) निषध (9) नल (10) नभ (11) पुण्डरीक (12) क्षेमधन्वा (13) देवानीक (14) अहीनग (15) पारियात्र (16) शील (17) उन्नाभ (18) वज्रनाभ (19) शङ्खण (20) व्युषिताश्व (21) विश्वसह (22) हिरण्यनाभ (23) कौशल्य (24) ब्रह्मनिष्ठ (25) पुत्रपुष्य (26) ध्रुवसन्धि (27) सुदर्शन (28) अग्निवर्ण। यहाँ राम के साथ लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न को जोड़कर कुल–31 राजाओं का वर्णन प्राप्त है। इस वंशक्रम को अधोलिखित चार्ट से आसानी से स्मरण किया जा सकता है–

रघुवंश में वर्णित राजाओं की सूची

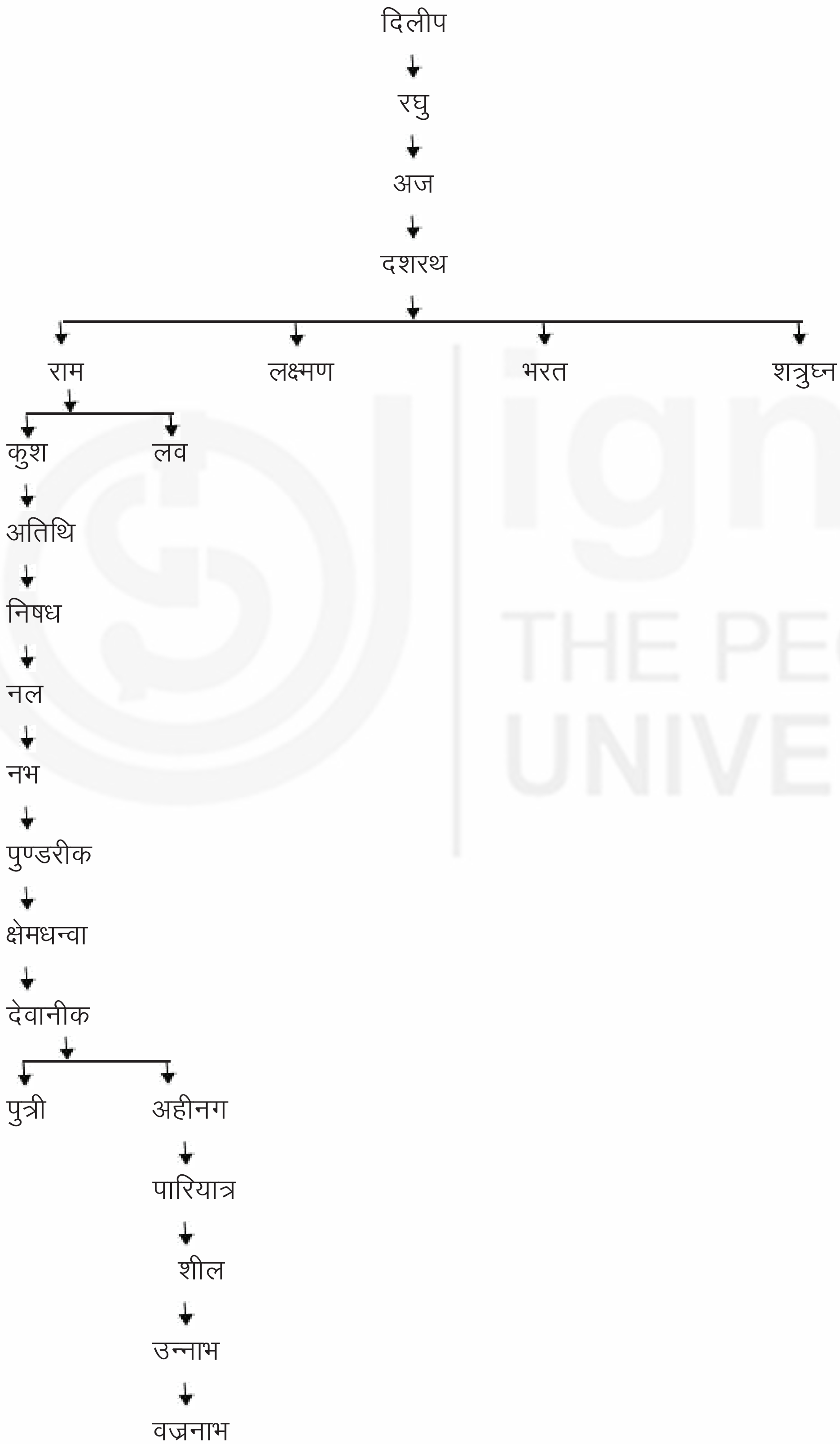

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

↓
शङ्खण
↓
व्युषिताश्व
↓
विश्वसह
↓
हिरण्यनाभ
↓
कौशल्य (सोमसुत)
↓
ब्रह्मनिष्ठ
↓
पुत्र(पौष्य)
↓
ध्रुवसन्धि
↓
सुदर्शन
↓
अग्निवर्ण

5.3.2 रघुवंश की प्रमुख सूक्तियाँ

महाकवियों की वाणी में कुछ विचित्र सा चमत्कार होता है जो अनायास ही आदर्श तथा प्रेरणाप्रद सूक्तियाँ तथा मुहावरे बना देता है। महाकवि कालिदास के श्लोकों में सहज चमत्कार द्रष्टव्य है। भगवती सरस्वती की असीम अनुकम्पा से जो सहज कवित्व स्फुरित होता है वह लोक के लिए सूक्तियों और मुहावरों के रूप में एक अनुकरणीय वाक्य बन जाता है। रघुवंश महाकाव्य की प्रमुख सूक्तियाँ इस प्रकार हैं–

1. हेम्नः संलक्ष्यते ह्यग्नौ विशुद्धिः श्यामिकापि वा। (रघु. 1/10)
2. सन्ततिः शुद्धवंश्या हि परत्रेह च शर्मणे। (रघु. 1/69)
3. क्रिया हि वस्तूपहिता प्रसीदति। (रघु. 3/29)
4. मनो हि जन्मान्तरसंगतिज्ञम्। (रघु. 7/15)
5. तेजसां हि न वयः समीक्ष्यते। (रघु. 11/1)
6. पर्यायपीतस्य सुरैर्हिमांशोः कलाक्षयः श्लाघ्यतरो हि वृद्धेः। (रघु.5/16)

5.3.3 रघुवंश का कथासार

रघुवंश महाकाव्य उन्नीस सर्गों में विभक्त है। इसमें महाकाव्य के सभी लक्षण घटित होते हैं। इक्ष्वाकुवंश के महाप्रतापी राजा दिलीप से लेकर अग्निवर्ण तक सत्ताईस राजाओं का वर्णन इस महाकाव्य में किया गया है। रघुवंश का वर्णन वाल्मीकि रामायण, महाभारत तथा पद्मपुराण में प्राप्त है।

महाकवि कालिदास शब्द और अर्थ के समान एकीभूत, सृष्टि के माता-पिता भगवान् शिव और पार्वती को वाणी और अर्थ की सिद्धि के लिये नमन करते हुए रघुवंश महाकाव्य का प्रारम्भ करते हैं। ग्रन्थ की निर्विघ्न समाप्ति के लिये मंगलाचरण करके स्वयं को रघुकुल जैसे महान् वंश का वर्णन करने में असमर्थ कहते हैं तथा लिखते हैं कि वाल्मीकि आदि महाकवियों ने सूर्यवंश पर काव्य की रचना करके वाणी का द्वार खोल दिया है तभी मैं अल्पमति इस वंश का वर्णन कर पा रहा हूँ। वरना इतने उच्च कुल का वर्णन करना मेरे लिये ठीक वैसा ही है जैसे कि कोई व्यक्ति छोटी सी नौका से विशाल समुद्र को पार करने का प्रयास करता है।

वेदों में ऊँकार के समान इक्ष्वाकुवंशीय राजाओं में सर्वप्रथम सूर्यपुत्र वैवस्वत मनु हुए। मनु के वंश में प्रखर मेधा, न्यायप्रिय और दयालु राजा दिलीप हुए। राजा दिलीप न्यायप्रिय, धर्मावलम्बी तथा सच्चरित्रवान् थे किन्तु उनके कोई सन्तान नहीं थी। रानी सुदक्षिणा को लेकर आप गुरू वसिष्ठ के आश्रम पहुँचे। गुरू वसिष्ठ ने उन्हें कामधेनु की पुत्री नन्दिनी (गौ) की सेवा करने का निर्देश दिया।

जिस समय गुरू वसिष्ठ नन्दिनी की सेवा का निर्देश दे रहे थे उसी समय नन्दिनी वन से लौटकर आ गई। उसके खुर की धूल से राजा दिलीप और रानी सुदक्षिणा पवित्र हो गए। अपने बछड़े को देखते ही नन्दिनी के थनों से दूध बहने लगा। गुरू वसिष्ठ ने राजा दिलीप से कहा– 'राजन्'। नाम लेते ही नन्दिनी आ गई है तथा बहते दूध का दर्शन हुआ है यह अत्यन्त शुभ शकुन है आपका मनोरथ शीघ्र पूर्ण होगा। आज से आप दोनों इसका अनुकरण करो, इसकी सेवा करो। तभी से राजा दिलीप ने गौ सेवा व्रत की प्रतिज्ञा की।

द्वितीय सर्ग

प्रातःकाल रानी सुदक्षिणा ने चन्दन व माला से नन्दिनी गौ की पूजा की और राजा दिलीप ने उसे वन में जाने के लिए खोल दिया। जिस प्रकार स्मृतियाँ श्रुति का अनुगमन करती हैं उसी प्रकार रानी सुदक्षिणा नन्दिनी का अनुसरण करने लगी। इक्कीस दिन प्रातः-सायं पूजा करते हुए गाय की अगुवाई करते हुए दम्पती गाय के सोने के बाद सोते तथा उसके जागने पर उसकी सेवा करते। बाईसवें दिन राजा दिलीप की परीक्षा लेने के लिये नन्दिनी पर्वत की कन्दराओं में घुस गयी और एक शेर ने उस पर आक्रमण कर दिया। राजा दिलीप ने उस शेर से आग्रह किया कि नन्दिनी को छोड़ दे और उसे खा ले। सिंह ने अनेक प्रकार से राजा को नन्दिनी की रक्षा से विमुख करने का प्रयास किया किन्तु राजा तो दृढ़ थे उन्होंने कहा जिसकी रक्षा तथा सेवा के लिए गुरूजी ने मुझे आज्ञा दी है यदि उसकी रक्षा में प्राण भी चले जाएं तो उचित ही होगा। यह कहकर राजा ने सिंह के सम्मुख आत्मसमर्पण कर दिया। इस समर्पण से प्रसन्न होकर नन्दिनी ने राजा दिलीप को पुत्रप्राप्ति का वरदान दिया और पत्ते का दोना बनाकर उसमें दूध पीने का आदेश दिया। राजा ने बछड़े के दूध पीने के बाद तथा गुरूजी का हवन कार्य सिद्ध होने के पश्चात् दूध पिया। अगले दिन अपने व्रत का पारणा करके राजा दिलीप सुदक्षिणा के साथ अपनी राजधानी लौटे और शीघ्र ही सुदक्षिणा ने गर्भ धारण किया।

तृतीय सर्ग

गर्भ धारण करने से सुदक्षिणा दिन पर दिन कृशकाय होने लगी। राजा ने सुदक्षिणा की सखियों को यथोचित प्रबन्ध करने का निर्देश दिया। कालक्रम से सुदक्षिणा ने रघु को जन्म दिया। राजा दिलीप ने रघु का यज्ञोपवीत करके उसे युवराज बना दिया। राजा दिलीप ने सौ अश्वमेघ यज्ञ करने का संकल्प लिया। निन्यानवे अश्वमेघ यज्ञ सम्पन्न होने पर दिलीप

ने अपने घोड़े को छोड़ा और इन्द्र उस घोड़े को लेकर लुप्त हो गए। रघु ने इन्द्र का पीछा करके घोड़ा छुड़वाना चाहा किन्तु इन्द्र से जीत नहीं सका। उसके पराक्रम से प्रसन्न होकर इन्द्र ने रघु से वर मांगने को कहा। रघु ने कहा कि इस अश्व के आपके पास होने की सूचना मेरे पिता को प्राप्त हो जाए और सौ अश्वमेघ यज्ञ का फल मेरे पिता को प्राप्त हो जाए। राजा दिलीप अपने यज्ञ को पूर्ण करके वानप्रस्थ आश्रम चले जाते हैं।

चतुर्थ सर्ग

चतुर्थ सर्ग में महाराज रघु की दिग्विजय का वर्णन है। रघु ने दिग्विजय यात्रा प्रारम्भ की। जिन-जिन राजाओं को रघु जीतते जा रहे थे उन-उन राजाओं को पुनः वहीं का राजा बना देते थे जिससे रघु का मार्ग निष्कण्टक होता जा रहा था। पूर्व दिशा के राज्य तथा बंगाल के राज्यों को जीतते हुए रघु कलिंग, महेन्द्र पर्वत तथा वहाँ से दक्षिण भारत को जीतते हुए चारों और विजयी हुए। चारों दिशाओं को जीतकर रघु अपनी दिग्विजय यात्रा को पूर्ण कर राजधानी अयोध्या लौटे दिग्विजय के अनन्तर रघु ने विश्वजित् नामक यज्ञ प्रारम्भ किया।

पंचम सर्ग

विश्वजित् यज्ञ में दक्षिणा के रूप में रघु ने अपना सर्वस्व दान कर दिया तब वरतन्तु महर्षि के शिष्य मुनि कौत्स रघु से गुरूदक्षिणा लेने पहुँचे और चौदह विद्याओं की गुरूदक्षिणा में चौदह करोड़ स्वर्णमुद्राऐं मांगी। अगले दिन रघु ने कुबेर के यहाँ चढ़ाई करने की योजना बनाई। प्रातः काल खजाने में सुवर्ण वृष्टि हो गई। रघु ने सारा धन कौत्स को देना चाहा किन्तु कौत्स ने 14 करोड़ से एक भी अधिक मुद्रा लेने से मना कर दिया। कौत्स ने प्रसन्न होकर रघु को पुत्रप्राप्ति का वरदान दिया। रघु के यहाँ अज का जन्म हुआ, इन्दुमती स्वयंवर में अज को बुलाया गया।

षष्ठ सर्ग

इन्दुमती स्वयंवर का मनोरम दृश्य। स्वयंवर में उपस्थित सभी राजाओं और राजकुमारों का वर्णन अतिरोचक तरीके से किया गया है। इन्दुमती की सखी सुनन्दा इन्दुमती को उपस्थित राजाओं का परिचय करवाती है। जैसे ही इन्दुमती राजा अज के सम्मुख पहुँचती है अज की दक्षिण भुजा फड़कने लगती है। इन्दुमती वहीं रुक जाती है और सुनन्दा के हाथों से कुंकुम के चूर्ण से लाल धागे वाली स्वयंवर माला को रघुपुत्र अज के गले में डाल देती है।

सप्तम सर्ग

रघुपुत्र अज के द्वारा इन्दुमती का वरण करके जाते समय राजमार्ग पर अंगनाओं की विविध चेष्टाओं का विस्तृत वर्णन प्राप्त है। रति और कामदेव के समान अज और इन्दुमती सुशोभित हो रहे थे। मार्ग में स्वयंवर में हारे हुए राजाओं ने अज को घेर कर रोक लिया। अज ने उनका सामना किया और गन्धर्वराज प्रियंवद से प्राप्त निद्राकारक अस्त्र को फेंका जिससे सारे राजा व उनकी सेना निद्रामग्न हो गई और अज ने विजयबिगुल बजाया। इन्दुमती शर्म से झुककर अज के साथ अयोध्या आ गई। अज इन्दुमती के आने पर राजा रघु वानप्रस्थ हेतु प्रस्थान कर गए।

अष्टम सर्ग

अज के राज्य में प्रवेश करते ही राज्य का सारा भार उन पर आ गया। राज्याभिषेक के बाद अज ने अपना राज्य बड़ी कुशलता से चलाया। अज में रघु के राज्योचित सारे गुण भी दिखाई दे रहे थे रघु का परलोकगमन और अज द्वारा और्ध्वदेहिक संस्कार का वर्णन। इन्दुमती ने एक वीर पुत्र को जन्म दिया जिसे दशरथ नाम दिया गया। अज इन्दुमती के साथ नन्दनवन में विहार कर रहे थे। वहाँ नारद की वीणा पर से गिरी पुष्पमाला के आघात

से इन्दुमती मर जाती है। इस मृत्यु पर अज का करुण विलाप अष्टम सर्ग का वैशिष्ट्य है महर्षि वसिष्ठ अपने शिष्य के साथ अज को सन्देश भेजते हैं और इन्दुमती के शाप के कारण पृथ्वी पर आने तथा स्वर्गपुष्प के स्पर्श से मुक्ति पाने का वृत्तान्त बताते हैं। इन्दुमती की मृत्यु के आठ वर्ष के बाद राजा अज भी परलोक चले गए।

नवम सर्ग

दशरथ ने अपने बाणों से शत्रुओं का सफाया कर दिया तथा उत्तर कोशल का राज्य बड़ी कुशलता से सम्भाला। दशरथ ने कौशल, मगध तथा कैकय देश की कन्याओं कौशल्या, सुमित्रा तथा कैकेयी से विवाह किया। कुछ समय व्यतीत होने के बाद राजा दशरथ अपने योग्य मन्त्रियों के साथ आखेट खेलने वन में गए। अनेक दिन आखेट खेलने के बाद एक दिन मृग का पीछा करते हुए राजा दशरथ अपने समूह से बिछड़ गए। एक तालाब के किनारे का प्रसंग है। श्रवणकुमार अपने अन्धे माता-पिता को तीर्थ ले जा रहा था। जल पीने के लिये श्रवण तालाब पर जल भर रहा था। दशरथ ने भूलवश कोई जंगली पशु जानकर शब्दभेदी बाण से उसे मार डाला। श्रवण के मरने से पुत्र वियोग में उसके माता-पिता भी दशरथ को पुत्रवियोग में मरने का शाप देकर मर गए।

दशम सर्ग

राजा दशरथ पुत्र प्राप्ति की कामना से पुत्रेष्टि यज्ञ करते हैं। दूसरी ओर देवगण राक्षस रावण के अत्याचारों से खिन्न होकर भगवान् विष्णु के पास जाते हैं। विष्णु भगवान् खीर का कटोरा लेकर दशरथ के यहाँ प्रस्तुत होते हैं दशरथ की तीनों रानियों की कोख से राम, भरत, लक्ष्मण और शत्रुघ्न (खीर के प्रभाव से विष्णु के अंशावतार रूप) का जन्म होता है। अयोध्या में हर्षोत्सव मनाया गया। चारों राजकुमारों का जातकर्म संस्कार किया गया। वेदाध्ययन हेतु चारों राजकुमार गुरू वसिष्ठ जी के आश्रम में ब्रह्मचर्यपूर्वक विद्याभ्यास करने लगे।

एकादश सर्ग

विश्वामित्र राजा दशरथ से यज्ञ की रक्षा के लिए राम और लक्ष्मण को मांगते हैं। ऋषि विश्वामित्र के साथ जाते हुए मार्ग में ताड़का नाम की राक्षसी मिलती है। राम अपने पराक्रम से उसे पराजित कर देते हैं। फिर आश्रम पहुँचकर राम ने अन्य राक्षसों को भी मार गिराया। मिथिला में राजा जनक के यहाँ धनुषयज्ञ का आयोजन हुआ। विश्वामित्र अपने दोनों शिष्यों राम व लक्ष्मण के साथ वहाँ पहुँचे। राम ने शिवजी का धनुष तोड़ दिया और सीताजी ने राम के गले में जयमाला डाल दी। विधि-विधान सहित विवाह सम्पन्न किया गया।

द्वादशसर्ग

राजा दशरथ ने राम के राज्याभिषेक की घोषणा की। माता कैकेयी ने देवासुर संग्राम के समय राजा दशरथ के प्राणों की रक्षा के बदले दो वर प्राप्त किये थे। उनमें से प्रथम वर तो कैकेयी ने राम के लिये चौदह वर्ष का वनवास मांगा और द्वितीय में अपने पुत्र भरत को राजगद्दी दिये जाने का वर मांगा। राम ने सहर्ष वनगमन स्वीकार किया। राजा जनक पुत्र वियोग में विलाप करते हुए परलोक चले गए। भरत ने ननिहाल से लौटकर सम्पूर्ण वृत्तान्त सुना तो अग्रज राम को लेने वन में गए। राम ने उन्हें समझाकर वापस भेज दिया। अत्यधिक आग्रह पर अपनी चरण पादुका भरत को दे दी।

इधर वन में शूर्पनखा के अभद्र आचरण के कारण लक्ष्मण ने उसके नाक व कान काटकर उसे कुरूप बना दिया। रावण ने अपनी बहन के अपमान का बदला लेने के लिये छल से सीताहरण कर लिया।

राम ने रावण का वध करके लंका की गद्दी पर विभीषण को बैठाया और पुष्पक विमान पर बैठकर अयोध्या लौट आए ।

त्रयोदश सर्ग

राम ने सीता की अग्निपरीक्षा ली। अयोध्या लौटते समय माल्यवान पर्वत तथा पम्पासरोवर का सुन्दर वर्णन किया। लंका से विजय प्राप्त कर सीता के साथ लौटते समय राम सीता को मार्ग में आने वाले स्थलों को दिखाकर याद दिला रहे हैं कि किन-किन स्थलों पर रुककर राम ने सीता की खोज की तथा क्या-क्या योजनाएँ बनाई थीं। भरत मन्त्रियों के साथ अर्घ्यपात्र लेकर राम की अगुवाई करने आते हैं। राम सुग्रीव तथा विभीषण का परिचय भरत से करवाते हैं। भरत उन दोनों का भी अभिवादन तथा सत्कार करते हैं। श्री राम की शोभायात्रा अयोध्या की ओर बढ़ती है।

चतुर्दश सर्ग

मार्ग में अयोध्या के उपवनों में विश्राम करने के बाद उपवन में ही कौशल्या और सुमित्रा माता राम, लक्ष्मण और जानकी से मिलने आयीं। राजमहल आने पर शुभ मुहूर्त में श्री राम का राज्याभिषेक किया गया। इसके बाद राम ने स्वयं माता कैकेयी के पास जाकर अपने मधुर वचनों से उनके संकोच को दूर किया। श्रीराम ने पर्याप्त सत्कार कर सुग्रीव व विभीषण को भी विदा किया। सीता गर्भिणी हो गई। तभी राम ने सीता के लोकोपवाद की चर्चा सुनी। सीता ने गर्भिणी मनोरथ में गंगातटवर्ती तपोवन देखने की इच्छा व्यक्त की। राम ने इसी मनोरथपूर्ति के व्याज से लक्ष्मण से सीता को वाल्मीकि मुनि के आश्रम के पास छोड़ आने का आदेश दिया। वन में यह परित्याग जानकर सीता करुण विलाप करने लगी। मुनि वाल्मीकि उन्हें आश्रम ले आए। गर्भिणी सीता मुनि कुमारियों के साथ रहने लगी। राम भी सीता का परित्याग करके अत्यन्त दुःखी थे। अश्वमेघ यज्ञ में भी राम ने सीताजी की स्वर्णमयी प्रतिमा को ही साथ में बिठाया।

पंचदश सर्ग

लवणासुर नामक राक्षस के उपद्रवों के कारण यमुना तटवर्ती तपस्विजन खिन्न थे। राम से सहायता मांगने उपस्थित होने पर राम ने शत्रुघ्न को इस संकट को दूर करने भेजा। शत्रुघ्न मार्ग में वाल्मीकि मुनि के आश्रम में विश्राम के लिये रुके। उसी रात सीता माता ने लव और कुश को जन्म दिया। शत्रुघ्न ने आगे बढ़कर लवणासुर का वध करके तपस्वियों की तपःस्थली को सुरक्षित किया। महर्षि वाल्मीकि ने लव और कुश के समस्त संस्कार पूरे विधि-विधान से किये तथा बड़े होने पर उन्हें वेदांग पढ़ाया और स्वरचित रामायण का गान भी करवाया।

शम्बूक नामक शूद्र के इन्द्र पद पाने की लालसा में तप करने का प्रयास करने पर अनधिकार चेष्टा के कारण पाप फैल गया। जिसकी वजह से अयोध्या में एक ब्राह्मणपुत्र की अकाल मृत्यु हो गई। राम ने यह सत्य खोजकर शम्बूक का सिर धड़ से अलग कर दिया। ब्राह्मणपुत्र पुनर्जीवित हो उठा। लव-कुश रामकथा सुनाने के लिये राम के दरबार में उपस्थित हुए। वाल्मीकि ने कहा महाराज अब सीता को स्वीकार करो। राम ने सीता से अपनी पवित्रता सिद्ध करके महल वापस आने को कहा तो सीता ने राजसभा में धरती माता को प्रणाम करके कहा यदि मैं पतिव्रता हूँ और पवित्र हूँ तो मुझे अपनी गोद में ले लो और सीता धरती में समा गई। राम भी स्वर्गलोक को चले गए।

रघुवंश के समस्त राजकुमारों ने अग्रज कुश को अपना उत्तराधिकारी बनाया। एक दिन स्वप्न में कुश ने देखा कि एक स्त्री उनसे अयोध्या में निवास करने का निवेदन कर रही है। अयोध्या आकर बड़े-बड़े याज्ञिक अनुष्ठान करके कुश ने यज्ञस्तूप गाड़ दिये और अयोध्या में राज करने लगे। कुश के प्रयासों से धीरे-धीरे अयोध्या का सौन्दर्य बढ़ने लगा। एक बार जल क्रीडा करते समय कुश के हाथ से जैत्र नामक आभूषण जो कि अगस्त्य ऋषि ने श्रीराम को व श्रीराम ने कुश को दिया था जल में गिर गया। बहुत ढूंढने पर भी न मिलने पर कुश ने अपना धनुष चढ़ाया कि जल में जो नाग रहते हैं उन्होंने उसे छिपा लिया हो तो मैं उन्हें मार कर जैत्र वापस ले लेता हूँ।

तभी जल से नागराज कुमद् आए और वह आभूषण सौंपकर अपनी कन्या कुमुद्वती से विवाह का प्रस्ताव रखा। कुश का कुमुद्वती से विवाह हुआ।

सप्तदश सर्ग

राजा कुश और रानी कुमुद्वती के पुत्र अतिथि हुए। समस्त विद्याओं का ज्ञान प्राप्त कर अतिथि योग्य शासक बने। उसका विवाह करके कुश ने अतिथि का राज्याभिषेक किया। कुश का इन्द्र की सहायतार्थ शामिल हुए एक युद्ध में वध हो गया। सप्तदश सर्ग में अतिथि का सुयोग्य शासक तथा पराक्रमी होना वर्णित है। अतिथि के राज्य में सर्वत्र सुख-शांति-सम्पन्नता और खुशियाँ व्याप्त थीं। अतिथि ने अश्वमेघ यज्ञ का आयोजन किया। यज्ञ में जिन ब्राह्मणों ने सहयोग किया उन सभी का सत्कार अतिथि ने कुबेर के समान किया।

अष्टादश सर्ग

निषध देश की राजकुमारी राजा अतिथि की रानी थी। उनके एक अत्यन्त तेजस्वी और वीर पुत्र का जन्म हुआ जिसका नाम निषध रखा गया। निषध भी अपने पिता के समान पराक्रमी योद्धा बना। समुद्रपर्यन्त व्याप्त पृथ्वी तक उसने अपना राज्य फैलाया। निषध के पुत्र राजा नल हुए। नल के नभ नाम का योग्य पुत्र हुआ। नभ के पुण्डरीक नाम का पुत्र हुआ। पुण्डरीक के क्षेमधन्वा नाम का पुत्र हुआ। क्षेमधन्वा से देवानीक का जन्म हुआ। देवानीक का पुत्र अहीनग, अहीनग के शील, शील के उन्नाभ, उन्नाभ के वज्रनाभ, वज्रनाभ के शंखण, शंखण के पुत्र अश्विनी कुमार (व्युषिताश्व), व्युषिताश्व के विश्वसह, विश्वसह के हिरण्यनाभ, हिरण्यनाभ के कौशल्य, कौशल्य के वसिष्ठ, वसिष्ठ के शिरोमणि, शिरोमणि के पुन्न, पुन्न के पुष्य, पुष्य के पुत्र ध्रुवसन्धि, ध्रुवसन्धि के पुत्र सुदर्शन हुए। इस प्रकार 18वें सर्ग में इक्कीस राजाओं का वर्णन प्राप्त होता है।

ऊनविंश सर्ग

तेजस्वी राजा सुदर्शन के अग्निवर्ण नाम का पुत्र हुआ। सुदर्शन ने अग्निवर्ण को राजगद्दी पर बैठाया और स्वयं नैमिषारण्य में रहने लगे। वानप्रस्थ का नियमपूर्वक पालन करते हुए सुदर्शन धार्मिक कृत्य कर रहे थे। दूसरी तरफ अग्निवर्ण कुछ समय पश्चात् राज काज का भार मन्त्रियों पर छोड़कर स्वयं कामुक का जीवन व्यतीत करने लगा। समय के प्रभाव के कारण राजा क्षय रोग से पीड़ित हो गया। राजा की मृत्यु के बाद मन्त्रियों ने राजभवन के उपवन में ही राजा की देह को पंचतत्त्व में विलीन करवा दिया और गर्भिणी महारानी को पुत्र प्राप्ति तथा पुत्र के युवा होने तक राजगद्दी पर बिठा दिया। महारानी मन्त्रियों से मन्त्रणा करते हुए राजकाज व्यवस्थित रूप से चलाती रही और उसका पुत्र ही रघुवंश का अन्तिम राजा हुआ।

बोध प्रश्न 2

1. नीचे दिये गये कथनों में से सत्य (√) तथा असत्य (×) कथन का चयन कीजिये–
   - i) रघुवंश महाकाव्य का मूल स्रोत रामायण है– ( )
   - ii) राजा दिलीप सुदक्षिणा के साथ गुरु वसिष्ठ के आश्रम में गये थे – ( )
   - iii) राजा रघु ने नन्दिनी की सेवा की – ( )
   - iv) इन्दुमती स्वयंवर का वर्णन षष्ठ सर्ग में है– ( )
   - v) अज के पुत्र का नाम अतिथि है– ( )
   - vi) राजा दशरथ ने पुत्रेष्टि यज्ञ किया – ( )
2. रघुवंश महाकाव्य की रचना किसने की ?

   ....

   ....
3. रघुवंश महाकाव्य में कितने सर्ग तथा श्लोक हैं ?

   ....

   ....
4. रघुवंश में कितने राजाओं का वर्णन प्राप्त है ?

   ....

   ....

अभ्यास प्रश्न 2

1. रघुवंश महाकाव्य का परिचय लिखिये।
2. रघुवंश महाकाव्य के द्वितीय सर्ग का कथासार लिखिये।
3. रघुवंश में वर्णित राजाओं के नाम लिखिये।

5.4 रघुवंश महाकाव्य के प्रमुख पात्रों का चरित्र-चित्रण

5.4.1 राजा रघु का चरित्र-चित्रण

वाल्मीकि रामायण के अध्ययन से यह स्पष्ट है कि रघु इतने प्रभावी तथा प्रतापी राजा हुए कि उनके नाम से उनके वंशज रघुवंशी तथा राघव कहलाए। रघु महाराज दिलीप तथा रानी सुदक्षिणा के दृढ़संकल्प, कठोर साधना, गुरू वसिष्ठ के आशीर्वाद तथा नन्दिनी गौ के कृपा प्रसाद से पृथ्वी पर आए। जिस प्रकार सूर्य भगवान् अपने पवनवेग से दौड़ने वाले घोड़ों द्वारा कम ही समय में चारों दिशाओं को पार कर लेते हैं वैसे ही रघु ने अपनी तीक्ष्ण बुद्धि से चार समुद्रों के समान आन्वीक्षिकी, त्रयी, वार्ता और दण्डनीति इन चारों विद्याओं को शीघ्र सीख लिया।

"धियः समग्रैः स गुणैरुदारधीः क्रमाच्चतस्रश्चतुर्णवोपमाः।
ततार विद्याः पवनातिपातिभिर्दिशो हरिद्भिर्हरितामिवेश्वरः"।।

व्यक्तित्व – युवावस्था के कारण रघु की भुजाऐं हल के जुए के समान दृढ़ और लम्बी हो गयीं। छाती चौड़ी हो गयी और कन्धे फैल गए। तथापि वे इस तरह झुककर चलते थे कि दिलीप के समक्ष अपना बड़प्पन प्रकट नहीं होने देते थे।

"युवा युगत्यायतबाहुरंसलः कपाटवक्षाः परिणद्धकन्धरः।

वपुः प्रकर्षादजयत् गुरुं रघुस्तथापि नीचैर्विनयाददृश्यत"।। (रघुवंश–3/34)

श्रद्धा– रघु की गौ माता पर इतनी श्रद्धा थी कि जब पिता दिलीप के सौवें अश्वमेघ यज्ञ का अश्व छोड़ने पर इन्द्र ने उसे अदृश्य कर लिया तब नन्दिनी के मिलने पर रघु ने श्रद्धावश गौमूत्र को नेत्रों में लगाकर दिव्य दृष्टि प्राप्त की।

"तदङ्गनिःस्यन्दजलेन लोचने प्रमृज्य पुण्येन पुरस्कृतः सताम्।
अतीन्द्रिष्वप्युपपन्नदर्शनो बभूव भावेषु दिलीपनन्दनः"।। (रघुवंश–3/41)

पराक्रम– राजा दिलीप के अश्वमेघ यज्ञ के अश्व को जब इन्द्र छोड़ नहीं रहे थे तब रघु ने उन्हें युद्ध के लिये ललकारा और बड़ी वीरता से इन्द्र से युद्ध किया। इन्द्र के धनुष की डोरी को तोड़ डाला। इन्द्र के अत्यन्त कठोर वज्र का प्रहार भी सह लिया जिसे कोई भी सहन नहीं कर सकता था। इन्द्र ने स्वयं प्रसन्न होकर रघु से कहा कि पर्वतों के पंख काटने वाले मेरे कठोर वज्र के आघात को आज तक अन्य कोई सहन नहीं कर पाया है। मैं तुम्हारे शौर्य पर प्रसन्न हूँ।

"असंगमद्रिष्वपि सारवत्तया न मे त्वदन्येन विसोढमायुधम्"।

5.4.2 राजा दिलीप का चरित्र-चित्रण

कालिदास ने रघुवंश महाकाव्य के नायक के रूप में सर्वप्रथम राजा दिलीप का चरित्र प्रस्तुत किया है। सौष्ठव, ज्ञान, शक्ति और पराक्रम में दिलीप अद्वितीय राजा हैं।

शास्त्रज्ञान के अनुरूप आचरण– राजा दिलीप ज्ञानवान् होते हुए भी मौन रहते हैं, शक्ति होते हुए भी क्षमा का गुण उनमें विद्यमान है, दान देते हुए भी प्रशंसाराहित्य का गुण है। विपरीत गुण राजा दिलीप में सहोदर की भाँति अत्यन्त प्रेम से रहते हैं।

"ज्ञाने मौनं क्षमा शक्तौ त्यागे श्लाघा विपर्ययः

गुणा गुणानुबन्धित्वात्तस्य सप्रसवा इव"।।

जैसा राजा दिलीप का सुन्दर स्वरूप था वैसी ही प्रखर उनकी मेधा थी। अपनी तीक्ष्ण बुद्धि से आपने सारे शास्त्र शीघ्र ही पढ़ डाले। शास्त्र के अनुसार ही वे कार्यारम्भ करते तथा उस कार्य को समाप्त करते तथा अपूर्व सफलता भी प्राप्त करते।

"आकार सदृशः प्रज्ञः प्रज्ञया सदृशागमः।
आगमैः सदृशारम्भ आरम्भ सदृशोदयः"।।

प्रजा प्रेम– एक उत्तम शासक के गुण दिलीप में प्रचुरता से थे। दिलीप सांसारिक सुखों में रत रहते थे किन्तु उनमें लिप्त नहीं रहते थे। दण्ड और पुरस्कार का निर्णय वे निष्पक्ष भाव से करते थे। प्रजा का पालन अपनी सन्तति के समान करते तथा उनकी आजीविका का प्रबन्ध भी करते थे। अपनी प्रजा के लिये अन्न, वस्त्र, धन तथा शिक्षा का समुचित प्रबन्ध करते थे।

"प्रजानां विनयाधानाद्रक्षणाद्भरणादपि।
सपिता पितरस्तासां केवलं जन्महेतवः"।।

अपने इस वात्सल्य के कारण प्रजा के वास्तविक पिता तो दिलीप ही थे। गोत्रीय पिता तो नाममात्र के लिये रह गए थे।

निडरता– राजा दिलीप के नन्दिनी की सेवा करते समय सिंह के द्वारा जब नन्दिनी पर आक्रमण किया गया तब अत्यन्त निडर भाव से राजा ने स्वयं की देह को सिंह के सम्मुख समर्पित कर दिया।

दयालुता– नन्दिनी ने जब पुत्र प्राप्ति का वर दिया और दिलीप से कहा कि पत्ते के दोने में मेरा दूध लेकर पी लो। तब दिलीप ने कहा कि इस दूध पर पहला हक बछड़े का तथा दूसरा हक गुरूजी के यज्ञ भाग का है। उसके पश्चात् ही मैं दूध ग्रहण करूंगा।

रक्षाभाव– गुरू वसिष्ठ के द्वारा दिलीप को नन्दिनी की सेवा में नियुक्त किया गया। दिलीप ने नन्दिनी की रक्षा हेतु अपने प्राणों को भी तुच्छ गिना। शरणागत की रक्षा का यह भाव उत्तम शासक का चिन्ह है।

शिष्टाचार– राजा दिलीप में व्यावहारिक शिष्टाचार का भी ज्ञान है। जब वे पुत्र प्राप्त्याशा से गुरू वसिष्ठ के आश्रम में पहुँचते हैं तब रथ पर से शिष्टाचारवश सहारा देकर पहले रानी सुदक्षिणा को उतारते हैं फिर स्वयं रथ से उतरते हैं।

गुरूभक्ति– राजा दिलीप जब गुरू वसिष्ठ के आश्रम में पहुंचते हैं तो आदरपूर्वक गुरूजी को ही सर्वसामर्थ्यवान् कहते हुए उनका अभिवादन करते हैं। आपके प्रभाव से ही मेरे राज्य के सातों अंग कुशल हैं। आप मन्त्रों के वेत्ता हैं आपके मन्त्रों की शक्ति मेरे शत्रुओं को दूर से ही रोककर रखती है। आपके ब्रह्म तेज के बल से प्रजा में सब नगरवासी कष्टरहित सौ बरस जीते हैं।

"तव मन्त्रकृतो मन्त्रैर्दूरात्प्रशमितारिभिः।
प्रत्यादिश्यन्त इव मे दृष्टलक्ष्यभिदः शराः"।।

5.4.3 राजा राम का चरित्र-चित्रण

रामायण के प्रति आस्था और श्रद्धा के कारण श्रीराम को भगवान् माना गया है। प्रभु श्री राम को कालिदास ने भी भक्तिभावपूर्वक सम्मान दिया है।

वपुसौष्ठव– भगवान् श्री राम का स्वरूप अत्यन्त मनोरम था। तभी उनका नाम राम रखा गया। जब राजा राम विश्वामित्र के साथ कामदेव की तपःस्थली पहुंचे तब वे कामदेव के सौन्दर्य को भी तिरोहित कर रहे थे।

राम इत्यभिरामेणवपुषस्तस्य चोदितः।
नामधेय गुरुश्चक्रे जगत्प्रथममंगलम्।।

राम के सौन्दर्य पर राजा जनक भी मुग्ध हो गए थे तभी उनके मन में यह शंका हुई कि मैंने सीता स्वयंवर में धनुष को तोड़ने जैसी कठोर शर्त क्यों रखी?

तस्य वीक्ष्य ललितं वपुः शिशोः पार्थिवः प्रथितवंशजन्मनः।

स्वयं विचिन्त्य च धनुर्दुरानमं पीड़िता दुहितृशुल्कसंस्थय।। (रघुवंश–11/38)

दयालुता और सहानुभूति– राम स्वभाव से अत्यन्त दयालु थे दीन दुखियों के प्रति उनके हृदय में सदैव सहानुभूति रहती थी। अपनी एक भूल के कारण गौतम ऋषि की पत्नी अहिल्या समाज से बहिष्कृत कर दी गई। राम ने उस पर कृपा कर उसका उद्धार किया। जटायु के घायल होने पर राम बड़े विचलित हो गए और जटायु के मरण पर उसकी सारी क्रियाएं अपने पिता के समान कीं।

कुशल राजनीतिज्ञ– बाली के विरुद्ध सुग्रीव की सहायता करके राम ने रावण से युद्ध करने के लिये एक शक्तिशाली मित्र प्राप्त किया और विभीषण को आश्रय देकर शत्रु के घर का भेद जानने की नीति को अपनाया।

संस्कृति का सम्मान– अन्य जातियों और क्षेत्रों के रीति-रिवाजों का राम सम्मान करते थे। बाली की पत्नी तारा को रखने पर राम ने सुग्रीव की निन्दा नहीं की। बाली का राज्य सुग्रीव को तथा रावण का राज्य विभीषण को देकर उन्होंने अपने उदार व्यक्तित्व को पुष्ट किया।

पराक्रम– विश्वामित्र ऋषि ने राम को धनुर्वेद के वे गूढ रहस्य तथा विशेष शस्त्रास्त्र प्रदान किये जो अन्य किसी के पास नहीं थे। राम में शारीरिक बल भी प्रचुर था। उन्होंने अल्पायु में ही ताड़कासुर तथा सुबाहु का संहार किया। दण्डकारण्य में भी अनेक राक्षसों को अकेले ही परास्त कर दिया।

विनयशीलता– क्षत्रिय धर्म का पालन करते हुए राम को परशुराम की चुनौती को तो स्वीकार करना पड़ा था किन्तु परशुराम द्वारा उत्तेजित होकर राम को कहे गए कटु वाक्यों के उत्तर में राम ने अशिष्ट शब्दों का प्रयोग नहीं किया और अन्त में जब परशुराम ने हार मान ली तब राम ने उनके चरणों में प्रणाम करके क्षमा याचना की। यह राम की विनयशीलता का उदाहरण है।

समानता का भाव– राजा राम सदैव समभाव में रहते थे। राम इतने गम्भीर व्यक्तित्व वाले थे कि राज्याभिषेक के बहुमूल्य वस्त्राभूषण धारण करते समय भी उनका मुख अतीव प्रसन्न नहीं था और वन जाते समय वल्कल धारण करके भी उनका मुख विषाद से व्यथित नहीं था। हर परिस्थिति में उनका मुख समभाव में ही रहता था।

एकपत्नीव्रत– राम सीता से अत्यधिक प्रेम करते थे। सीता का परित्याग जब लोक लाज से किया तब लक्ष्मण से उसका अन्तिम सन्देश सुनकर उनके अश्रु बहने लगे। राम सीता से इतना प्रेम करते थे कि उन्होंने सीता परित्याग के बाद भी दूसरा विवाह नहीं किया। यहां तक कि अश्वमेघ यज्ञ का आयोजन करने में जब जोड़े से यज्ञ का आयोजन करने की स्थिति आई तब भी श्रीराम ने सोने की सीता की मूर्ति ही बनवाई। अन्य स्त्री के विषय में सोचा भी नहीं।

"सीतां हित्वा दशमुखरिपुर्नोपयेमे यदन्यां

तस्या एव प्रतिकृत सखो यत्क्रतूनाजहार"।।(रघुवंश–14/87)

आदर्शमानव– भगवान् श्री राम को रामायण में आदर्शचरित्र के रूप में प्रतिष्ठित किया गया है। रघुवंश में भी श्री राम एक आदर्श पुत्र, आदर्श भाई, आदर्श राजा तथा आदर्श मित्र के रूप में बताए गए हैं।

5.4.4 राजा अज का चरित्र-चित्रण

कालिदास ने रघुवंश महाकाव्य के पात्रों में अज को मध्यम कोटि का नायक बताया है। अज वीर और गम्भीर नायक हैं।

नर्मदा नदी के तट पर पहुंचने पर एक जंगली हाथी अज के शिविर पर हमला कर देता है। अज इस हमले से तनिक भी विचलित नहीं होते।

स्वयंवर में इन्दुमती द्वारा वरण करने के बाद लौटते समय हारे हुए राजाओं ने क्रुद्ध होकर अज को घेर लिया। अज बड़े निडर होकर उनका मुकाबला करके उनको हरा देते हैं। गन्धर्वास्त्र छोड़कर राजाओं की सेना को सुलाकर रानी इन्दुमती को वहां से ले जाते हैं–

"ततो धनुष्कर्षणमूढहस्तमेकां सपर्यस्तशिरस्त्रजालम्।

तस्थौ ध्वजस्तम्भनिषण्णदेहं निद्राविधेय नरदेवसैन्यम्"।।(रघुवंश–7/62)

5.4.5 सीता का चरित्र-चित्रण

रघुवंश में कालिदास ने रघुवंशी राजाओं के चरित्र-चित्रण पर अपनी लेखनी चलाई है। तथापि राजाओं का वर्णन करते समय तीन चार स्त्रीपात्र गृहस्थी के व्याज से प्रत्यक्ष हुए हैं। उन पात्रों में सीता भी महत्त्वपूर्ण हैं। स्त्रीपात्रों का चित्रण प्रसंगवश प्राप्त है तथापि सीता सच्चरित्रा नायिका के रूप में रघुवंश में वर्णित हैं। सीता के जीवन में बहुत कम समय ऐसा आया जब उन्होंने गृहस्थी के सुख को प्राप्त किया। अन्यथा सीता के जीवन में दुःख व अपमान बहुत है।

राजा जनक की पालिता पुत्री सीता को प्रभु श्रीराम ने स्वयंवर में धनुष तोड़कर वरण किया। राम के प्रति सीता का प्रेम व भक्ति इतनी सहज थी कि राम को वनवास सुनाए जाने पर सीता भी वल्कल धारण करके वन प्रस्थान हेतु तैयार हो गईं। उनका स्वभाव अत्यन्त सरल एवं कोमल था तथापि वन के कष्टों को उन्होंने हंसते-हंसते झेला।

राम के द्वारा जब लोकभय से सीता का परित्याग किया गया तब ऋषि वाल्मीकि ने बड़े कटु शब्दों में सीता से राम की निन्दा की तब भी सीताजी के मुख से पति के विरुद्ध एक शब्द भी नहीं निकला। उन्होंने गुरूजी से सिर्फ इतना ही कहा कि शायद ये मेरे ही किन्हीं पूर्वजन्म के पापों का फल है। पतिव्रता धर्म का इतनी श्रद्धा और प्रेम से पालन अनुकरणीय है।

"कल्याणबुद्धेरथवा तवायं न कामचारो मयि शङ्कनीयः।

ममैव जन्मान्तरपातकानां विपाकविस्फूर्जधुरप्रसह्यः"।।(रघुवंश–14/62)

5.4.6 इन्दुमती का चरित्र-चित्रण

राजा अज की पत्नी इन्दुमती अपूर्व रूप सौन्दर्य की धनी है। सुकुमारता और लावण्य उनमें अपूर्व है। कवि कालिदास ने इन्दुमती को विधाता की विशेष रचना कहा है। स्वयंवर में पधारे सारे राजा उन पर मोहित हो गए थे किन्तु वे सुशिक्षित और गुणों की पारखी हैं, अतः उन्होंने अपने योग्य वर के रूप में अज को ही चुना। उनकी जोड़ी को सभी लोग चन्द्रमा व चाँदनी का मेल बताते हैं, गंगा और समुद्र का मिलन बताते हैं।

"शशिमुपगतेयं कौमुदी मेघयुक्तं जलनिधिमनुरूपं जह्नु कन्यावतीर्णा"।।

इन्दुमती मात्र रूप व लावण्य की ही प्रतिमूर्ति नहीं थी अपितु उनमें कुशल गृहिणी के भी समस्त गुण विद्यमान थे। पशुप्रेम, ललित कला प्रवीणता, विश्वस्तसखी तथा पति की उत्तम परामर्शक जैसे गुण उनमें विद्यमान थे। इन्दुमती को कालिदास ने आदर्श गृहिणी के रूप में रघुवंश में चित्रित किया है।

5.4.7 सुदक्षिणा का चरित्र-चित्रण

अयोध्या की महारानी, राजा दिलीप की रानी सुदक्षिणा मगध देश की राजकुमारी थी। अत्यन्त उदारहृदय, दयालु, दान देने में तत्पर सुदक्षिणा आदर्श व्यक्तित्व की धनी हैं। अपने सौन्दर्यमात्र को लेकर अन्तःपुर में रहने वाली नहीं अपितु राजा के साथ राजकार्यों हेतु तथा प्रजाजनों से मिलने वे बाहर भी निकलती थीं। महारानी होते हुए भी पुत्र प्राप्ति की प्रत्याशा में वे गुरू वशिष्ठ के आश्रम में जाकर पति के साथ ऋषि तथा ऋषि पत्नी के चरणों में वन्दन करती हैं तथा कुशा बिछाकर सो जाती हैं। गुरू के द्वारा बताए गए ब्रह्मचर्य का भी पालन करती हैं तथा गौ नन्दिनी की तन मन से सेवा करती हैं।

नन्दिनी प्रसन्न होकर जब दिलीप-सुदक्षिणा को पुत्रप्राप्ति का वर देती है तब सुदक्षिणा गर्भिणी होती हैं उस समय उसका व्यवहार स्त्रीजनोचित लज्जा वाला रहता है। गर्भ के भार से वह कृशकाय हो जाती हैं तब राजा सुदक्षिणा की सखियों से कहते हैं कि यह मुझसे लज्जावश अपनी इच्छा नहीं बता पाएगी। आप सब इसका चाहा गया मनोरथ पूर्ण करने की व्यवस्था कीजिये।

"न मे ह्रियाशंसति किञ्चिदीप्सितंस्पृहावती वस्तुषु केषु मागधी।
इति स्म पृच्छत्यनुवेलमादृतःप्रियासखीरुत्तर कोसलेश्वरः"।।(रघुवंश–3/5)

बोध प्रश्न 3

1. रिक्त स्थानों की पूति कीजिये।
   i) राजा दिलीप ने .... यज्ञ किया।
   ii) वात्सल्य के कारण प्रजा के वास्तविक पिता तो राजा .... ही थे।
   iii) राजा दिलीप ने .... की सेवा की।
   iv) ताड़कासुर का वध .... ने किया।
   v) सुदक्षिणा .... देश की राजकुमारी थीं।
2. किस राजा के नाम से रघुवंश का नाम 'रघुवंश' पड़ा ?

   ....

   ....
3. किस राजा का जन्म नन्दिनी गौ के आशीर्वाद से हुआ ?

   ....

   ....
4. 'आकारसदृशः प्रज्ञः' किस राजा के लिये कहा गया है ?

   ....

   ....

अभ्यास प्रश्न 3

1. राम का चरित्र-चित्रण लिखिये।
2. सुदक्षिणा के चरित्र की पाँच विशेषतायें लिखिये।

5.5 सारांश

प्रिय छात्रों! इस इकाई के प्रारम्भ में आपने महाकवि कालिदास तथा उनके जन्म-स्थान के विषय में पढ़ा। उपमा कालिदासस्य, कनिष्ठिकाधिष्ठित कालिदासः जैसी प्रशस्तियों को पढ़ा। कालिदास के वैशिष्ट्य में हमने रस-परिपाक, चरित्र-चित्रण आदि को जाना। रघुवंश महाकाव्य में उन्नीस सर्ग तथा 1569 श्लोक हैं तथा रघुवंश के 31 राजाओं का वर्णन है। 'तेजसां हि न वयः समीक्ष्यते' जैसी रघुवंश की प्रमुख सूक्तियों को पढ़ा। रघुवंश महाकाव्य की सम्पूर्ण कथा का सर्गानुसार अध्ययन किया। रघुवंशी प्रमुख राजा रघु, दिलीप, अज, राम, सीता, इन्दुमती, सुदक्षिणा का चरित्र-चित्रण पढ़ा। इस इकाई के अध्ययन से हम रघुवंश की सम्पूर्ण कथा, इसके प्रमुख पात्र तथा कालिदास के विषय में जान चुके हैं।

5.6 शब्दावली

सौधः	–	भवन
चक्षुष्मताम्	–	नेत्र वालों के
प्रसीद	–	प्रसन्न होना
तुतोष	–	सन्तुष्ट किया
आयुधम्	–	अस्त्र
तुरङ्गः	–	घोड़ा
हेम्नः	–	सोने की
प्रसीदति	–	प्रसन्न होती है
वयः	–	आयु
हिमांशुः	–	चन्द्रमा

5.7 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1. रघुवंशमहाकाव्यम्, डॉ. कृष्णमणि त्रिपाठी, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, 2011।
2. रघुवंशम्, प्रो. हरि दामोदर वेलणकर, राष्ट्रिय संस्कृत संस्थानम्, नवदेहली, 2011।
3. कालिदास ग्रन्थावली, ब्रह्मानन्द त्रिपाठी, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, 2012।
4. संस्कृत साहित्य का इतिहास, आचार्य बलदेव उपाध्याय, शारदा निकेतन, कस्तूरबा नगर, सिगरा, वाराणसी, 2001।
5. अमरकोश, चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, जवाहर नगर, बंगलो रोड़, दिल्ली, 2011।
6. संस्कृत साहित्य का इतिहास, वाचस्पति गैरोला, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी, 2009।
7. संस्कृत-वाङ्मय का बृहद् इतिहास, (चतुर्थ खण्ड), प्रो. राधवल्लभ त्रिपाठी, उत्तर प्रदेश संस्कृत संस्थान, लखनऊ, 1967।

5.8 बोध/अभ्यास प्रश्न के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) (i) (क)मागधी (ii) (ग) प्रो. लक्ष्मीधर कल्ला (iii) (ख) रघुवंश

2) कालिदास

3) उपमा कालिदासस्य।

बोध प्रश्न 2

1) (i) सत्य (ii) सत्य (iii) असत्य (iv) सत्य (v) असत्य (vi) सत्य

2) महाकवि कालिदास

3) 19 सर्ग, 1569 श्लोक

4) 31 राजाओं का

बोध प्रश्न 3

1) (i) अश्वमेघ (ii) दिलीप (iii) नन्दिनी (iv) श्रीराम (v) मगध

2) रघु

3) रघु

4) दिलीप

अभ्यास प्रश्न

इन प्रश्नों के उत्तर विद्यार्थी स्वयं लिखें।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 6 रघुवंशम् (प्रथम सर्ग) श्लोक 1-10

इकाई की रूपरेखा

6.0 उद्देश्य

6.1 प्रस्तावना

6.2 काव्यांश की व्याख्या

- 6.2.1 मंगलाचरण
- 6.2.2 सूर्यवंश का प्रभाव तथा कवि की विनम्रता
- 6.2.3 पूर्व कवियों की अधमर्णता
- 6.2.4 रघुकुल के राजाओं की विशेषता
- 6.2.5 विद्वानों से रघुवंशी राजाओं के चरित्र को सुनने का आग्रह

6.3 सारांश

6.4 शब्दावली

6.5 कुछ उपयोगी पुस्तकें

6.6 बोध/अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

6.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन से आप –

- रघुवंश महाकाव्य की विशेषता को जान सकेंगे।
- रघुवंशी राजाओं की प्रजावत्सलता तथा उनके गुणों को जान सकेंगे।
- कालिदास की विनम्रता के बारे में जान सकेंगे।
- रघुवंशी राजाओं की जीवनचर्या के बारे में जान सकेंगे।
- कालिदास की लेखन शैली से परिचित हो सकेंगे।
- रघुवंश महाकाव्य के राष्ट्रीय स्वरूप का परिचय पा सकेंगे।
- प्राचीन भारतीय राजाओं के चरित्र, त्याग और गुणग्राहिता को जान सकेंगे।

6.1 प्रस्तावना

आप जानते हैं कि कालिदास शृंगार व लालित्य के कवि हैं। इतिहासकारों ने उन्हें राष्ट्रकवि की संज्ञा दी है। कालिदास भारतीय संस्कृति के अनन्य उपासक कवि हैं, अतः उनके काव्य में भारतीयता के स्वर उभरे हैं। यद्यपि उनकी जन्मभूमि के विषय में मतैक्य नहीं है। बंगाल, विदर्भ, विदिशा, उज्जयिनी, कश्मीर, गढ़वाल आदि को इतिहासकारों ने उनकी जन्मभूमि निरूपित करने का प्रयास किया है। वह किस क्षेत्र के, किस नगर के, किस प्रदेश के, किस जनपद के हैं, इस विषय में मतभेद हो सकता है किन्तु कालिदास भारत वसुन्धरा के सपूत हैं, यह मानने में कोई आपत्ति नहीं है। गुणवान् व्यक्ति को प्रत्येक जन, प्रत्येक समाज, प्रत्येक नगर, प्रत्येक जनपद और प्रत्येक राज्य अपनाना चाहता है, अतः विद्वानों का अपने-अपने पक्ष में तर्क देकर कालिदास को अपने क्षेत्र का सिद्ध करना स्वाभाविक है। किन्तु कालिदास भारतमाता के अमर सपूत हैं, भारत की अतुल्य संस्कृति के उपासक हैं, भारतीय काव्य परम्परा के मणि हैं, भारतीयता के अग्रदूत हैं, इसमें कोई सन्देह नहीं। उनके व्यक्तित्व

को किसी जाति विशेष से, किसी नगर विशेष से, किसी क्षेत्र विशेष से या किसी राज्य विशेष से बाँधा नहीं जा सकता। वे भारत के लाल हैं, भारत की अमर कविता के स्रोत हैं और भारत के गुणों के अप्रतिम गायक हैं।

आप यह भी जानते हैं कि उन्होंने तीन नाटकों, दो खण्डकाव्यों तथा दो महाकाव्यों की रचना की जिनमें रघुवंश महाकाव्य, सूर्यवंश के गौरवशाली इतिहास का लेखा-जोखा प्रस्तुत करता है। इसमें कुल 19 सर्ग हैं। यह कविता और दर्शन का सुन्दर समन्वय उपस्थापित करता है। वस्तु वर्णन की दृष्टि से रघुवंश महाकाव्य के तीन खण्ड किये जाते हैं – पहला रघुखण्ड – प्रथम से आठवें सर्ग तक है जिसमें दिलीप, रघु तथा अज का वर्णन किया गया है। दूसरा रामखण्ड कहलाता है। इसमें पन्द्रहवें सर्ग तक की कथा को समाहित किया जाता है। दशरथ और राम आदि इस खण्ड के प्रमुख राजा हैं। तीसरा खण्ड खिलखण्ड कहा जा सकता है। इसमें कवि अपने महाकाव्य को उपसंहार की ओर ले जाता है।

रघुवंश वीर रस प्रधान महाकाव्य है। कवि ने इस महाकाव्य में रघुवंश के उत्कर्ष और अपकर्ष का मनोहारी वर्णन किया है। आपके पाठ्यक्रम में इस महाकाव्य के प्रथम सर्ग के प्रारम्भिक 25 श्लोक निर्धारित हैं। जिनमें प्रथम दस श्लोकों का अध्ययन आप इस इकाई में करेंगे। इन दस श्लोकों में प्रथम श्लोक मंगलाचरण के रूप में है। जिसमें कवि ने अपने आराध्य शिव और पार्वती की वन्दना की है। दूसरे श्लोक में उन्होंने सूर्य से उत्पन्न रघुवंश के महत्त्व का संकेत करते हुये उसके वर्णन में अपनी असमर्थता का निरूपण किया है जो उनकी विनम्रता का द्योतक है। तीसरा श्लोक भी कवि की विनम्रता की ही प्रस्तुति है। चौथे में पूर्व कवियों के प्रति अधमर्णता व्यक्त की गयी है। पाँचवें से दसवें तक रघुवंशी राजाओं की विशेषताओं का वर्णन है। इस प्रकार आप इन दस श्लोकों में रघुवंश महाकाव्य की भूमिका का अध्ययन करेंगे जो आपके लिये शिक्षाप्रद तो होगा ही, आपके जीवन को उत्कर्ष भी प्रदान करेगा।

6.2 काव्यांश की व्याख्या

6.2.1 मंगलाचरण

वागर्थाविव सम्पृक्तौ वागर्थप्रतिपत्तये।
जगतः पितरौ वन्दे पार्वतीपरमश्वरौ।।1।।

प्रसंग– किसी भी ग्रन्थ की निर्विघ्न समाप्ति के लिये तथा पाठकों, अध्यापकों एवं व्याख्याकारों के कल्याण के लिये तथा शिष्यों की शिक्षा के लिये कवि अपने काव्य के प्रारम्भ में मंगलाचरण के रूप में अपने इष्ट देवता की आराधना करते हैं। उक्त श्लोक में महाकवि कालिदास ने भगवान् शिव व पार्वती को प्रणाम किया है। यह ग्रन्थ का मंगलाचरण श्लोक है।

अन्वयः – (अहं) वागर्थौ इव सम्पृक्तौ जगतः पितरौ पार्वतीपरमेश्वरौ वागर्थप्रतिपत्तये वन्दे।

शब्दार्थ – अहं = मैं कालिदास, वागर्थौ इव = शब्द और अर्थ के समान, सम्पृक्तौ = नित्य सम्बद्ध, जगतः = संसार के, पितरौ = माता और पिता, पार्वतीपरमेश्वरौ = पार्वती और शिव को, वागर्थप्रतिपत्तये = शब्दार्थ के ज्ञान के लिए, वन्दे = प्रणाम करता हूँ।

अनुवाद – मैं कालिदास शब्द और अर्थ के सामान नित्य सम्बद्ध जगत् के माता-पिता पार्वती और परमेश्वर शिव को शब्दार्थ के ज्ञान के लिए प्रणाम करता हूँ।

सन्धि–

वागर्थाविव – वगर्थौ + इव (अयादि सन्धि)

वागर्थप्रतिपत्तये – वाक् + अर्थप्रतिपत्तये (जश्त्व सन्धि)

समास –

पितरौ – माता च पिता च पितरौ (एकशेष द्वन्द्व समास)

पार्वतीपरमेश्वरौ – पार्वती च परमेश्वरश्च पार्वतीपरमेश्वरौ (द्वन्द्व समास)

वागर्थप्रतिपत्तये – वाक् च अर्थश्च वागर्थौ तयोः प्रतिपत्तिः तस्यै। (द्वन्द्व समास)

छन्द– अनुष्टुप्

लक्षणम् –श्लोके षष्ठं गुरु ज्ञेयं सर्वत्र लघुपञ्चमम्।
द्विचतुष्पादयोः ह्रस्वं सप्तमं दीर्घमन्ययोः।।

अनुष्टुप् या श्लोक के प्रत्येक पाद में 8 अक्षर होते हैं। इसमें षष्ठ अक्षर सदा गुरु होता है और पंचम अक्षर सदा लघु। द्वितीय और चतुर्थ चरण में सप्तम अक्षर लघु होता है और प्रथम तथा तृतीय चरण में गुरु होता है। अन्य अक्षर लघु या गुरु हो सकते हैं।

विशेष – साहित्य परम्परा में ग्रन्थ के प्रारम्भ में मंगलाचरण करने की परम्परा है। मंगलाचरण तीन प्रकार के होते हैं – 1. नमस्कारात्मक, 2. वस्तुनिर्देशात्मक एवं 3. आशीर्वादात्मक। महाकवि कालिदास ने अपने रघुवंशम् महाकाव्य के प्रारम्भ में नमस्कारात्मक मंगलाचरण किया है। ग्रन्थ की निर्विघ्न समाप्ति के लिये उन्होंने जगत् के माता-पिता शिव एवं पार्वती को प्रणाम किया है। परम्परा में भगवान् शिव को ज्ञान का अधिष्ठाता माना जाता है। ज्ञान के लिये शिव की ही उपासना करने का विधान है – 'ज्ञानमिच्छेत् महेश्वरात्'। मनीषियों के अनुसार शब्द की समग्र सम्पत्ति पार्वती के अधीन है। अशेष शब्दराशि को पार्वती ही धारण करती हैं तथा अर्थरूप समग्र जगत् को भगवान् शंकर धारण करते हैं। अतः शब्द और अर्थ की सम्यक् प्रतिपत्ति के लिये शिव और पार्वती की उपासना करनी चाहिये–

शब्दजातमशेषं तु धत्ते शर्वस्य वल्लभा।
अर्थरूपं यदखिलं धत्ते मुग्धेन्दुशेखरः।।

इसलिये कालिदास ने ग्रन्थ के प्रारम्भ में शब्दार्थ की प्रतिपत्ति के लिये शिव और पार्वती को नमस्कार किया है।

अलंकार – 'वागर्थाविव सम्पृक्तौ जगतः पितरौ वन्दे पार्वतीपरमेश्वरौ' में उपमान वागर्थौ से उपमेय पार्वतीपरमेश्वरौ का सम्पृक्तत्व रूप साधर्म्य वर्णित होने के कारण उपमा अलंकार है। इसका लक्षण – '**साम्यमन्येन वर्णयस्य वाच्यं चेदेकदोपमा**' है।

6.2.2 सूर्यवंश का प्रभाव तथा कवि की विनम्रता –

क्व सूर्यप्रभवो वंशः क्व चाल्पविषया मतिः।
तितीर्षुर्दुस्तरं मोहादुडुपेनास्मि सागरम्।।2।।

प्रसंग – प्रस्तुत पद्य में महाकवि कालिदास ने विनम्रता व्यक्त करते हुये महान् सूर्यवंश के समक्ष अपनी बुद्धि को स्वल्पविषया बताकर उस वंश का वर्णन करने में अपने को असमर्थ बताया है।

अन्वयः — सूर्यप्रभवः वंशः क्व, अल्पविषया मतिः च क्व, मोहात् दुस्तरं सागरम् उडुपेन तितीर्षुः अस्मि।

शब्दार्थ — सूर्यप्रभवः= सूर्य है कारण जिसका, वंश = कुल, क्व = कहाँ, अल्पविषया = अल्प विषय को जानने वाली, मति = बुद्धि, क्व = कहाँ, दुस्तरम् = पार करने में दुष्कर, सागरम् = सागर को, मोहात् = अज्ञानता से, उडुपेन = छोटी नाव से, तितीर्षुः = तैरने की इच्छा वाला, अस्मि = हूँ।

अनुवाद — सूर्य से उत्पन्न होने वाला कुल कहाँ और अल्प विषय को जानने वाली मेरी बुद्धि कहाँ? फिर भी मैं अत्यन्त कठिन सागर को अज्ञानतावश छोटी नाव से पार करने का इच्छुक हूँ, अर्थात् जैसे छोटी नाव से अगाध सागर को पार करना अत्यन्त कठिन है, उसी प्रकार मेरी स्वल्प विषयों को समझने वाली बुद्धि से महान् सूर्य वंश का वर्णन कर पाना अत्यन्त दुष्कर है।

सन्धि —

चाल्पविषया — च + अल्पविषया (दीर्घ सन्धि)

तितीर्षुर्दुस्तरम् — तितीर्षुः + दुस्तरम् (विसर्ग सन्धि)

उडुपेनास्मि — उडुपेन + अस्मि (दीर्घ सन्धि)

समास—

सूर्यप्रभवः — सूर्यः प्रभवो यस्य सः (बहुव्रीहि समास)

अल्पविषया — अल्पो विषयो यस्याः सा (बहुव्रीहि समास)

विशेष — सूर्यवंशी राजाओं के परम पवित्र चरित्र का वर्णन करने के लिये महाकवि कालिदास रघुवंश महाकाव्य की रचना के लिये उद्यत हैं। यह वंश सूर्य से उत्पन्न परम तेजस्वी वंश है। इसमें महाराज मनु, दिलीप, रघु, अज, दशरथ और राम जैसे पराक्रमी और यशस्वी राजा हुये हैं जिनका यश तथा धर्म समग्र भूमंडल में व्याप्त है। ऐसे राजाओं के वर्णन के लिये जिस सामर्थ्यवती मनीषा की आवश्यकता होती है, वह मुझमें नहीं है। रघुवंश यश और कीर्ति की लहरों से लहराता हुआ महान् समुद्र की भाँति है और मेरी स्वल्प विषया मति छोटी नौका के समान है। जिस प्रकार छोटी नौका से महान् समुद्र को नहीं पार किया जा सकता उसी प्रकार स्वल्प विषया मति से रघुवंश का वर्णन भी असम्भव है। कवि ने रघुवंश के उत्कर्ष का कथन अपनी कृति की उत्कृष्टता के लिये किया है तथा अपनी बुद्धि को स्वल्प विषया कहकर अपनी विनम्रता द्योतित की है।

मन्दः कवियशः प्रार्थी गमिष्याम्युपहास्यताम्।
प्रांशुलभ्ये फले लोभादुद्बाहुरिव वामनः।।3।।

प्रसंग — प्रस्तुत श्लोक में कालिदास ने सूर्यवंश का वर्णन सफलतापूर्वक न कर पाने के अनन्तर अपने को अपयश का पात्र बताने का उपक्रम किया है।

अन्वयः — मन्दः कवियशः प्रार्थी प्रांशुलभ्ये फले लोभात् उद्बाहुः वामन इव उपहास्यतां गमिष्यामि।

शब्दार्थ — मन्दः = मूढ, कवियशःप्रार्थी = कवि के यश को प्राप्त करने के इच्छुक, प्रांशुलभ्ये = उन्नत पुरुष द्वारा प्राप्त करने योग्य, फले = फल में, लोभात् = प्राप्ति के इच्छा से, उद्बाहुः = ऊपर उठाये हाथ वाले, वामनः = बौने पुरुष के, इव = समान, उपहास्यताम् = उपहास की पात्रता को, गमिष्यामि = प्राप्त करूँगा।

अनुवाद – मैं मूर्ख हूँ और कवि के यश को प्राप्त करने का इच्छुक हूँ। ऐसा मैं कालिदास उन्नत पुरुष के द्वारा प्राप्त करने योग्य फल की ओर लोभ से ऊपर हाथ उठाये हुए बौने व्यक्ति के समान उपहास का पात्र बनूँगा।

सन्धि –

गमिष्याम्युपहास्यताम् – गमिष्यामि + उपहास्यताम् (यण् सन्धि)

लोभादुद्बाहुः – लोभात् + उद्बाहुः (जश्त्व सन्धि)

उद्बाहुरिव – उद्बाहुः + इव (विसर्ग सन्धि)

समास –

कवियशःप्रार्थी – कवीनां यशः कवियशः तत् प्रार्थयते तच्छीलः (तत्पुरुष समास)

प्रांशुलभ्ये – प्रांशुना लभ्यः तस्मिन् (तत्पुरुष समास)

विशेष – प्रतिपाद्य वस्तु के महत्त्व और उसकी महिमा का प्रतिपादन कर कवि अपने प्रबन्ध के महत्त्व को द्योतित करते हैं। कालिदास का प्रतिपाद्य रघुवंश है। जिसके बारे में उन्होंने स्वयं बताया है कि यह वंश सूर्य से उत्पन्न है। सूर्य स्वयं समस्त भुवनों को प्रकाशित करते हैं, अतः उनके वंश का महान् होना स्वाभाविक है। एक तो सूर्य से उत्पन्न वंश, दूसरा मैं। उसके वर्णन को उद्यत स्वल्प बुद्धि वाला मन्द, मूर्ख होकर भी काव्यनिर्माण से प्राप्त होने वाले यश को पाने का इच्छुक हूँ। ऐसे में मेरी गति उस बौने के समान है जो उन्नत पुरुष द्वारा प्राप्त करने योग्य ऊँचे पेड़ में लगे फल को तोड़ने की इच्छा से हाथ ऊपर उठा रहा हो। ऐसे व्यक्ति की दशा को देखकर लोग उस पर हँसते हैं। मेरी भी वही गति होगी।

6.2.3 पूर्व कवियों की अधमर्णता

अथवा कृतवाग्द्वारे वंशेऽस्मिन् पूर्वसूरिभिः।
मणौ वज्रसमुत्कीर्णे सूत्रस्येवास्ति मे गतिः।।4।।

प्रसंग – महाकवि कालिदास ने प्रस्तुत श्लोक में पूर्व महाकवियों वाल्मीकि आदि के द्वारा अपने ग्रन्थों में किये गये सूर्यवंश के वर्णन के सहारे रघुवंश के वर्णन में अपनी सफलता की सम्भावना की है।

अन्वयः – अथवा पूर्वसूरिभिः कृतवाग्द्वारे अस्मिन् वंशे वज्रसमुत्कीर्णे मणौ सूत्रस्य इव मे गतिः अस्ति।

शब्दार्थ – अथवा = अथवा, पूर्वसूरिभिः = मेरे पूर्ववर्ती कवि वाल्मीकि, व्यास आदि के द्वारा, कृतवाग्द्वारे = रामायण आदि की रचना के माध्यम से, अस्मिन् = इस, वंशे = कुल में, वज्रसमुत्कीर्णे = वज्र द्वारा छिद्र किये गये, मणौ = मणि में, सूत्रस्य इव = सूत्र के समान, मे = मेरी, गतिः = स्थिति, अस्ति = है।

अनुवाद – वाल्मीकि आदि पूर्व कवियों ने सूर्यवंश पर रामायण आदिकाव्य लिखकर मेरे लिये वाणी का द्वार पहले ही खोल दिया है। अतः मेरे लिये सूर्यवंश में प्रविष्ट होना तथा उसका वर्णन करना उसी प्रकार सरल हो गया है, जिस प्रकार वज्र से छेदे गये मणि में सूत्र सरलता से प्रविष्ट हो जाता है।

सन्धि –

वंशेऽस्मिन् – वंशे + अस्मिन् (पूर्वरूप सन्धि)
सूत्रस्येव – सूत्रस्य + इव (गुण सन्धि)
इवास्ति – इव + अस्ति (दीर्घ सन्धि)

समास –

कृतवाग्द्वारे – कृतं वाक् द्वारं यस्य सः कृत्वाग्द्वारः तस्मिन् (बहुव्रीहि समास)
पूर्वसूरिभिः – पूर्वे च ते सूरयः, पूर्वसूरयः, तैः पूर्वसूरिभिः (कर्मधारय समास)
वज्रसमुत्कीर्णे – वज्रेण समुत्कीर्णः वज्रसमुत्कीर्णः, तस्मिन् (तत्पुरुष समास)

विशेष – कालिदास अति विनयशील और निरहंकार कवि हैं। पूर्व में उन्होंने अपनी बुद्धि को 'स्वल्पविषया' कहा था तथा अपने को मन्द भी कहा था जो उनकी विनयशीलता और विनम्रता का परिचायक है। अब जब रघुवंश का वर्णन करना उन्होंने प्रारम्भ कर ही दिया है तो इसकी पूर्णता भी निश्चित है। ऐसे में इस पूर्णता का श्रेय वह अपने पूर्व कवियों वाल्मीकि तथा व्यास आदि को देते हुये अपने को 'सूत्र' के समान बताते हैं। उनका कथन है कि रामायण की रचना करके वाल्मीकि ने तथा महाभारत में रामकथा का उल्लेख करके व्यास ने मेरे लिये रघुवंश में प्रवेश करने के लिये वाणी का द्वार बना दिया है। जिस प्रकार वज्र से छिद्र बना देने के बाद मणि जैसे कठोर पदार्थ में सूत्र जैसा कोमल तन्तु प्रविष्ट हो जाता है, उसी प्रकार वाल्मीकि आदि के द्वारा निर्मित वाग्द्वार से मणि में सूत्र की भाँति मैं प्रविष्ट हो जाऊँगा। इस प्रकार इस महाकाव्य की पूर्णता का समग्र श्रेय पूर्व कवियों को जाता है, मुझे नहीं।

6.2.4 रघुकुल के राजाओं की विशेषता

सोऽहमाजन्मशुद्धानामाफलोदयकर्मणाम्।
आसमुद्रक्षितीशानामानाकरथवर्त्मनाम्।।5।।

प्रसंग – प्रस्तुत श्लोक में कवि कालिदास ने रघुवंश के राजाओं की विशेषता का वर्णन किया है। ये राजा जन्म से शुद्ध, फलप्राप्तिपर्यन्त कार्य करने वाले, समुद्र पर्यन्त पृथिवी का शासन करने वाले थे। इनका रथ स्वर्ग तक जाता था।

अन्वयः – सः, अहम्, आजन्मशुद्धानाम् आफलोदयकर्मणाम्, आसमुद्रक्षितीशानाम्, आनाकरथवर्त्मनां ("रघूणाम् अन्वयं वक्ष्ये")।

शब्दार्थ – सः = वह पूर्वोक्त गुणों से युक्त, अहम् = मैं कालिदास, आजन्मशुद्धानाम्= जन्म से लेकर शुद्ध, आफलोदयकर्मणाम् = फलप्राप्ति पर्यन्त कार्य करने वाले, आसमुद्रक्षितिशानाम् = समुद्र पर्यन्त पृथ्वी के स्वामी, अनाकरथवर्त्मनाम् = स्वर्ग पर्यन्त रथ को ले जाने वाले।

अनुवाद – पूर्वोक्त गुणों से युक्त मैं कालिदास जन्म से शुद्ध, फल की प्राप्ति पर्यन्त कार्य को करने वाले, सागर पर्यन्त पृथ्वी के स्वामी, स्वर्ग पर्यन्त रथ को ले जाने वाले रघुवंशी राजाओं का वर्णन करूँगा।

सन्धि–

सोऽहम् – सः + अहम (पूर्वरूप-विसर्ग सन्धि)

सूत्रस्येवास्ति – सूत्रस्य + इव (गुण सन्धि)

इवास्ति – इव + अस्ति (दीर्घ सन्धि)

समास–

आफलोदयकर्मणाम्	– आफलोदयः कर्म येषां ते तेषां (बहुव्रीहि समास)
आसमुद्रक्षितीशानाम्	– आसमुद्रं क्षितेः ईशः क्षितीशः तेषाम् (तत्पुरुष समास)
अनाकरथर्त्मनाम्	– अनाकं रथवर्त्म येषां तेषाम् (बहुव्रीहि समास)

विशेष – कालिदास ने यहाँ पुनः अपने को 'सोऽहम्' कह कर अपने पूर्व गुणों का स्मरण कराया है तदनन्तर रघुवंशी राजाओं के वैशिष्ट्य का वर्णन प्रारम्भ किया है। 'सः' इस तत्पद से उन्होंने अपने अल्पविषयमतित्व आदि का स्मरण कराते हुये इस श्लोक में रघुवंशी राजाओं की चार विशेषताओं का उल्लेख किया है। 1. आजन्मशुद्धानाम् – जो जन्म से ही शुद्ध हैं, पवित्र हैं अर्थात् शास्त्रों द्वारा विहित जिनके निषेक आदि समस्त संस्कार सम्पन्न किये गये हैं। 2. आफलोदयकर्मणाम् – जो फल (परिणाम) की सिद्धि पर्यन्त कर्मशील रहते हैं। प्रारम्भ किये गये कार्य को मध्य में नहीं छोड़ते। 3. आसमुद्रक्षितीशानाम् – समुद्र पर्यन्त पृथ्वी के जो स्वामी हैं। इस पृथ्वी के वही चक्रवर्ती नरेश हैं। 4. अनाकरथवर्त्मनाम् – उनका रथ स्वर्ग तक जाता है। वे इन्द्र के सहचारी हैं। इस प्रकार के जो रघुवंशी दिलीप, अज आदि राजा हैं, मैं उनका वर्णन करूँगा।

यथाविधिहुताग्नीनां यथाकामार्चितार्थिनाम्।
यथाऽपराधदण्डानां यथाकालप्रबोधिनाम्।।6।।

प्रसंग – प्रस्तुत श्लोक में कवि कालिदास ने पूर्व श्लोक में वर्णित विशेषताओं के अतिरिक्त अन्य चार विशेषताओं का उल्लेख किया है।

अन्वयः – यथाविधिहुताग्नीनां, यथाकामार्चितार्थिनाम्, यथापराधदण्डानां, यथाकालप्रबोधिनां "रघूणामन्वयं वक्ष्ये"।

शब्दार्थ – यथाविधिहुताग्नीनाम् = विधि के अनुसार अग्नि में हवन करने वाले, यथाकामार्चितार्थिनाम् = याचकों की इच्छा के अनुसार दान देने वाले, यथाऽपराधदण्डानां = अपराध के अनुसार दण्ड देने वाले, यथाकालप्रबोधिनाम् = उचित समय पर प्रबुद्ध होकर कार्य पूर्ण करने वाले।

अनुवाद – मैं शास्त्र के अनुसार यज्ञ करने वाले और याचकों की इच्छा के अनुसार दान देने वाले, अपराध के अनुसार दण्ड देने वाले, उचित समय पर प्रबुद्ध होकर अपने कार्य को पूर्ण करने वाले, रघुवंश के राजाओं का वर्णन करूँगा।

सन्धि –

यथाकामार्चित	– यथाकाम + अर्चित (दीर्घ सन्धि)
यथापराध	– यथा + अपराध (दीर्घ सन्धि)

समास–

यथाविधिहुताग्नीनाम्	– विधिम् अनतिक्रम्य यथाविधि, यथाविधि हुता अग्नयः यैर्तेषाम् (अव्ययीभावगर्भबहुव्रीही)
यथापराधदण्डानाम्	– अपराधम् अनतिक्रम्य यथापराध दण्डो येषाम् तेषाम् (अव्ययीभावगर्भबहुव्रीही)

यथाकालप्रबोधिनाम् — कालम् अनतिक्रम्य यथाकालं, यथाकालम् (अव्ययीभावगर्भबहुव्रीही) प्रबोधिनः तेषां यथाकालप्रबोधिनाम्

विशेष — महाराज रघु के वंश में उत्पन्न राजाओं की अन्य विशेषतायें ये हैं कि वे 'यथाविधिहुताग्नि' हैं। शास्त्रों में प्रतिपादित विधि के अनुसार वे यज्ञ आदि का सम्पादन करते हैं तथा आहुति देकर अग्नि को तृप्त करते हैं। शास्त्रीय विधि का अतिक्रमण वे नहीं करते। वे अपने द्वार पर आये याचकों को उनकी इच्छा के अनुसार, जितनी आवश्यकता है उतना दान देकर उन्हें तृप्त करते हैं। रघु ने कौत्स को स्वयं यथेच्छ दान दिया था, जिसका वर्णन कालिदास ने इसी ग्रन्थ में किया है। रघुवंशी राजा अपराधी को उसके अपराध के अनुसार दण्ड देते हैं। जैसा अपराध वैसा दण्ड। वे 'यथाकालप्रबोधी' हैं। यथासमय प्रबोधनशील हैं, समय के अनुसार ही अपने कार्यों को सम्पन्न करते हैं। समय को व्यर्थ नहीं जाने देते और किसी कार्य की पूर्णता में विलम्ब भी नहीं करते।

त्यागाय सम्भृतार्थानां सत्याय मितभाषिणाम्।
यशसे विजिगीषूणां प्रजायै गृहमेधिनाम्।।7।।

प्रसंग — प्रस्तुत श्लोक में कालिदास ने रघुवंशी राजाओं के मितभाषिता आदि गुणों का सप्रयोजन उल्लेख किया है।

अन्वयः — त्यागाय सम्भृतार्थानां, सत्याय मितभाषिणां, यशसे विजिगीषूणां, प्रजायै गृहमेधिनाम्, ''रघूणामन्वयं वक्ष्ये''।

शब्दार्थ — त्यागाय = सत्पात्र को दान के लिए, सम्भृतानां = धन को इकट्ठा करने वाले, सत्याय = सत्य के लिए, मितभाषिणाम् = कम बोलने वाले, यशसे = यश के लिए, विजिगीषूणाम् = जीतने के इच्छा वाले, प्रजायै = प्रजा के लिए अर्थात् सन्तान के लिए, गृहमेधिनाम् = विवाह करने वाले।

अनुवाद — योग्य सत्पात्र को दान देने के लिए जो धन को संचित करते थे, सत्य बोलने के लिए जो कम बोलते थे और यश के लिए जीतने की इच्छा करते थे किसी अन्य के राज्य को छीनने के लिए नहीं। जो सन्तान प्राप्ति के लिए विवाह करते थे, भोग के लिए नहीं। मैं इस प्रकार के रघुवंशी राजाओं का वर्णन करूँगा।

समास—

सम्भृतार्थानाम् — सम्भृतः अर्थः यैः ते सम्भृतार्थाः तेषाम् सम्भृतार्थानाम् (बहुव्रीहि)

मितभाषिणाम् — मितं भाषन्ते तच्छीलाः इति मितभाषिणः तेषाम्।

विजिगीषूणाम् — विजेतुं इच्छन्ति इति विजिगीषन्ति, विजिगीषन्ति इति विजिगीषवः तेषां विजिगीषूणाम् (उपपदसमास)

गृहमेधीनाम् — गृहैः मेधितुम् शीलम् येषां ते गृहमेधिनः तेषां गृहमेधिनाम्

विशेष — रघुवंशी राजा धन का संचय करते थे किन्तु धन संचय का उनका लक्ष्य अपने वंश के उपभोग के लिये नहीं था। वे सत्पात्र को दान देने के लिये ही धन संचय करते थे। दुर्व्यापार हेतु धनार्जन में उनकी प्रवृत्ति नहीं होती थी। वे मितभाषी थे, कम बोलते थे किन्तु उनका मितभाषण किसी के पराभव के लिये न होकर सत्य के लिये था। अधिक बोलने वाला मिथ्याभाषी होता है। वे यश के लिये विजय प्राप्त करते थे, अर्थसंग्रह या किसी के राज्य में अधिकार करने के लिये नहीं। वे सन्तान प्राप्ति के लिये विवाह करते थे काम के लिये नहीं।

शैशवेऽभ्यस्तविद्यानां यौवने विषयैषिणाम्।
वार्धके मुनिवृत्तीनां योगेनान्ते तनुत्यजाम्।।8।।

प्रसंग – प्रस्तुत पद्य में महाकवि कालिदास ने रघुवंशी राजाओं के शैशव, यौवन और वृद्धावस्था के कार्यों का उल्लेख करते हुये उनकी विशेषतायें बतायी हैं।

अन्वयः – शैशवे, अभ्यस्तविद्यानां, यौवने, विषयैषिणां, वार्धके, मुनिवृत्तीनाम्, अन्ते, योगेन, तनुत्यजां, 'रघूणामन्वयं वक्ष्ये'।

शब्दार्थ – शैशवे = बाल्यकाल में, अभ्यस्तविद्यानां = समस्त विद्याओं का अभ्यास करने वाले, यौवने = युवावस्था में, विषयैषिणाम् = गृहस्थ में रहकर विषयों का भोग करने वाले, वार्धके = वृद्धावस्था में, मुनिवृत्तीनां = ऋषियों के समान आचार व्यवहार करने वाले, अन्ते = मृत्युकाल में, योगेन = चित्तवृत्तियों के निरोध से अर्थात् वानप्रस्थ आश्रम में परमात्मा को स्मरण करते हुए, तनुत्यजां = शरीर को छोड़ने वाले।

अनुवाद– बाल्यकाल में विद्या का अभ्यास करने वाले, युवावस्था में गृहस्थाश्रम के विषयों का भोग करने वाले, वृद्धावस्था में ऋषियों के समान व्यवहार करने वाले, अर्थात् (अरण्य में रहकर परमात्मा को ध्यान करने वाले) मरण काल में भगवान् को स्मरण करते हुए शरीर को छोड़ने वाले रघुवंश का वर्णन मैं कालिदास करूँगा।

सन्धि–

योगेनान्ते – योगेन+अन्ते (दीर्घ सन्धि)

समास–

अभ्यस्तविद्यानाम् – अभ्यस्ताः विद्या यैः ते अभ्यस्तविद्याः तेषाम् अभ्यस्तविद्यानाम् (बहुव्रीहि समास)

मुनिवृत्तीनाम् – मुनेः वृत्तिरिव वृत्तिः येषाम् ते मुनिवृत्तयः तेषाम् मुनिवृत्तीनाम् (बहुव्रीहि समास)

तनुत्यजाम् – तनुम् त्यजन्ति इति तनुत्यजः तेषाम् तनुत्यजाम् (उपपद समास)

विशेष – भारतीय संस्कृति में जीवन को चार आश्रमों में बांटा गया है – ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्यास। रघुवंश के राजा शैशव काल में ब्रह्मचर्य का पालन करते हुये विद्या का अभ्यास करते थे। यौवन काल में गृहस्थ आश्रम का पालन करते हुये विषय आदि का उपभोग करते थे तथा वृद्धावस्था में वानप्रस्थ धारण कर मुनियों के समान आचरण करते हुये अन्ततः संन्यास आश्रम में चित्तवृत्तियों का निरोध करके तथा परमात्मा का ध्यान करते हुये शरीर का त्याग करते थे। इस प्रकार उनका समग्र जीवन नियम और संयम से परिपूर्ण था।

रघूणामन्वयं वक्ष्ये तनुवाग्विभवोऽपि सन्।
तद्गुणैः कर्णमागत्य चापलाय प्रचोदितः।।9।।

प्रसंग – कालिदास ऊपर चार श्लोकों में रघुवंश में उत्पन्न राजाओं की विशेषताओं का उल्लेख करने के अनन्तर उनका वर्णन करने की प्रतिज्ञा करते हैं।

अन्वयः – सः, अहम् तनुवाग्विभवोऽपि, सन्, तद्गुणैः, कर्णमागत्य, चापलाय, प्रचोदितः, सन्, 'रघूणामन्वयं वक्ष्ये'।

शब्दार्थ— तनुवाग्विभवोऽपि = वाणी के सामर्थ्य से रहित, सन् = होने पर भी, तद्गुणैः = रघुवंशी राजाओं के गुणों के द्वारा, कर्णमागत्य = कान में आकर, चापलाय = चपलता के लिए अर्थात् बिना विचार किये कार्य करने के लिए, प्रचोदितः = प्रेरित किया, रघूणाम् = रघुवंशियों के, अन्वयम् = वंश को, वक्ष्ये = कहूँगा।

अनुवाद— यद्यपि मेरी वाणी में सामर्थ्य कम है फिर भी मैं पूर्व में कहे गये गुणों से युक्त रघुवंशी राजाओं का वर्णन करने को उद्यत हूँ, क्योंकि उनके गुणों ने मेरे कानों में आकर मुझे चपलता करने के लिये प्रेरित कर दिया है।

सन्धि —

तद्गुणैः — तत् + गुणैः (जश्त्व सन्धि)

समास—

तनुवाग्विभवः — वाचां विभवः वाग्विभवः तनुः वाग्विभवः यस्य सः तनुवाग्विभवः। (बहुव्रीहि समास)

तद्गुणैः — तेषां गुणाः तद्गुणाः तैः तद्गुणैः। (तत्पुरुष समास)

विशेष — कालिदास ने पाँचवें श्लोक से आठवें श्लोक तक कुल चार श्लोकों में, रघुवंशी राजाओं के सोलह गुणों का वर्णन किया है। जो निम्नलिखित हैं —

1. जन्म से ही पवित्रता, 2. फलप्राप्तिपर्यन्त उद्यमशीलता, 3. समुद्रपर्यन्त पृथ्वी का स्वामित्व, 4. स्वर्गपर्यन्त रथगामित्व, 5. शास्त्रोक्तविधि से यज्ञ सम्पादन, 6. याचकों को आवश्यकतानुसार दान देना, 7. अपराध के अनुसार दण्डविधान, 8. समयानुसार कार्य सम्पादन, 9. त्याग के लिये धन संचय, 10. सत्य के लिये मितभाषिता, 11. यश के लिये विजयेच्छा, 12. सन्तति के लिये गृहमेधिता, 13. शैशव काल में विद्या का अभ्यास, 14. यौवन में विषय का उपभोग, 15. वृद्धावस्था में मुनिवृत्ति का धारण तथा 16. संन्यास आश्रम योगबल से देह का त्याग।

कालिदास का कथन है कि यद्यपि मेरी वाणी में उतना सामर्थ्य नहीं है तथापि इन राजाओं के गुण श्रवण ने मुझे इनका गुणगान करने के लिये रघुवंश महाकाव्य की रचनारूप चपलता करने के लिये प्रेरित किया है। कवि ने अपने राजाओं के इन गुणों का निर्देश करके अपनी कृति की उत्कृष्टता का संकेत किया है।

6.2.5 विद्वानों से रघुवंशी राजाओं के चरित्र को सुनने का आग्रह

तं सन्तः श्रोतुमर्हन्ति सदसद्व्यक्तिहेतवः।
हेम्नः संलक्ष्यते ह्यग्नौ विशुद्धिः श्यामिकाऽपि वा।।10।।

प्रसंग — महाकवि कालिदास ने इस श्लोक में विद्वानों से रघुवंशी राजाओं के चरित्र को सुनने का आग्रह किया है तथा यह कहा है कि सोने की परीक्षा अग्नि में ही हुआ करती है।

अन्वयः — सदसद्व्यक्तिहेतवः सन्तः तं श्रोतुम् अर्हन्ति, हि हेम्नः विशुद्धिः श्यामिका अपि वा अग्नौ संलक्ष्यते।

शब्दार्थ— सदसद्व्यक्तिहेतवः = सत्य और असत्य को जानने वाले, सन्तः = विद्वान्, तं = उस रघुवंश को, श्रोतुम् = सुनने के लिए, अर्हन्ति = योग्य है, हि = क्योंकि, हेम्नः = सोने की, विशुद्धिः = शुद्धता, श्यामिका = दोषयुक्तता, अपि = भी, अग्नौ = अग्नि में ही, संलक्ष्यते = प्रतीत होती है।

अनुवाद– उचित और अनुचित को जानने वाले विद्वान् ही इस रघुवंश महाकाव्य को सुनने के योग्य हैं, क्योंकि स्वर्ण की शुद्धता अथवा दोष युक्तता का परीक्षण अग्नि में डालने से ही होता है।

सन्धि–

ह्यग्नौ – हि + अग्नौ (यण् सन्धि)

समास–

सदसद्व्यक्तिहेतवः – सत् च असत् सदसती सदसतोः व्यक्तिः सदसद्व्यक्तिः सदसद्व्यक्तेः हेतवः सदसद्व्यक्तिहेतवः (तत्पुरुष समास)

विशेष – उपर्युक्त श्लोक के माध्यम से महाकवि कालिदास ने विद्वानों को अपने काव्य के श्रवण के लिये आमन्त्रित किया है। उनको अग्नि तथा अपनी कृति को स्वर्ण माना है। स्वर्ण का परीक्षण अग्नि में ही हो सकता है।

बोध प्रश्न

1) **निम्नलिखित प्रश्नों में सही उत्तर का चयन कीजिये–**

(i) रघुवंशम् का मंगलाचरण है–

(क) नमस्कारात्मक (ख) वस्तुनिर्देशात्मक

(ग) आशीर्वादात्मक (घ) इनमें से कोई नहीं

(ii) रघुवंश महाकाव्य का अंगीरस है–

(क) श्रृंगार (ख) वीर

(ग) हास्य (घ) करुण

(iii) रघु ने दान दिया–

(क) परशुराम (ख) याज्ञवल्क्य

(ग) कौत्स (घ) विश्वामित्र

2) वस्तु वर्णन की दृष्टि से रघुवंश महाकाव्य के कितने खण्ड हैं ?

....

....

3) रघुवंशी राजाओं के पाँच गुण लिखिये।

....

....

अभ्यास प्रश्न–

1. कालिदास के मंगलाचरण का भावार्थ लिखिये।
2. कालिदास ने अपनी विनम्रता किन शब्दों में व्यक्त की है ?
3. 'प्रांशुलभ्ये फले लोभादुद्बाहुरिव वामनः' इस सूक्ति का भावार्थ लिखिये।
4. रघुवंश के राजाओं के गुणों पर निबन्ध लिखिये।

5. रघुवंश प्रथम सर्ग का सार अपने शब्दों में लिखिये।

6.3 सारांश

आपने इस इकाई में रघुवंश महाकाव्य के प्रारम्भिक दस श्लोकों का अध्ययन किया और यह जाना कि किसी भी कार्य के आरम्भ में प्रथमतः मंगलाचरण की परम्परा का निर्वाह करना चाहिये। कालिदास इस परम्परा का निर्वाह करते हुये शब्द और अर्थ के सामान नित्य सम्बद्ध जगत् के माता-पिता पार्वती और परमेश्वर शिव को प्रणाम करते हैं। अपनी विनम्रता को द्योतित करते हुये वे कहते हैं कि सूर्य से उत्पन्न होने वाला कुल कहाँ और अल्प विषय को जानने वाली मेरी बुद्धि कहाँ? फिर भी मैं अत्यन्त कठिन सागर को अज्ञानतावश छोटी नाव से पार करने का इच्छुक हूँ, अर्थात् जैसे छोटी नाव से अगाध सागर को पार करना अत्यन्त कठिन है, उसी प्रकार मेरी स्वल्प विषयों को समझने वाली बुद्धि से महान् सूर्य वंश का वर्णन कर पाना अत्यन्त दुष्कर है। कालिदास महान् काव्य प्रतिभा के कवि हैं, तथापि अपने वर्ण्यविषय की महत्ता को संकेतित करते हुये वे कहते हैं कि मैं मूर्ख हूँ और कवि के यश को प्राप्त करने का इच्छुक हूँ। अतः मैं कालिदास उन्नत पुरुष के द्वारा प्राप्त करने योग्य फल की ओर लोभ से ऊपर हाथ उठाये हुए बौने व्यक्ति के समान उपहास का पात्र बनूँगा।

कालिदास अपने कृतित्व का श्रेय स्वयं न लेते हुये उसे अपने पूर्ववर्ती वाल्मीकि आदि कवियों को देते हैं और कहते हैं कि सूर्यवंश पर रामायण आदिकाव्य लिखकर वाल्मीकि आदि कवियों ने मेरे लिये वाणी का द्वार पहले ही खोल दिया है। अतः मेरे लिये सूर्यवंश में प्रविष्ट होना तथा उसका वर्णन करना उसी प्रकार सरल हो गया है, जिस प्रकार वज्र से छेदे गये मणि में सूत्र सरलता से प्रविष्ट हो जाता है। कालिदास पुनः अपनी विनम्रता के कारण अपनी असमर्थता को दुहराते हुये रघुवंश के वर्णन में पुनः अपनी असमर्थता का स्मरण कराते हैं और कहते हैं कि मैं कालिदास जन्म से शुद्ध, फल की प्राप्ति पर्यन्त कार्य को करने वाले, सागरपर्यन्त पृथ्वी के स्वामी, स्वर्गपर्यन्त रथ को ले जाने वाले रघुवंशी राजाओं का वर्णन करूँगा। मैं शास्त्र के अनुसार यज्ञ करने वाले और याचकों की इच्छा के अनुसार दान देने वाले, अपराध के अनुसार दण्ड देने वाले, उचित समय पर प्रबुद्ध होकर अपने कार्य को पूर्ण करने वाले, रघुवंश के राजाओं का वर्णन करूँगा। योग्य सत्पात्र को दान देने के लिए जो धन को संचित करते थे, सत्य बोलने के लिए जो कम बोलते थे और यश के लिए जीतने की इच्छा करते थे, किसी अन्य के राज्य को छीनने के लिए नहीं। जो सन्तान प्राप्ति के लिए विवाह करते थे, भोग के लिए नहीं। मैं इस प्रकार के रघुवंशी राजाओं का वर्णन करूँगा। वे पुनः कहते हैं कि मैं बाल्यकाल में विद्या का अभ्यास करने वाले युवावस्था में गृहस्थाश्रम के विषयों का भोग करने वाले, वृद्धावस्था में ऋषियों के समान व्यवहार करने वाले, अर्थात् अरण्य में रहकर परमात्मा का ध्यान करने वाले तथा मरण काल में भगवान् का स्मरण करते हुए शरीर को छोड़ने वाले रघुवंश के राजाओं का वर्णन करूँगा।

उनका कथन है कि यद्यपि मेरी वाणी में सामर्थ्य कम है फिर भी मैं पूर्व में कहे गये गुणों से युक्त रघुवंशी राजाओं का वर्णन करने को उद्यत हूँ, क्योंकि उनके गुणों ने मेरे कानों में आकर मुझे चपलता करने के लिये प्रेरित कर दिया है।

कालिदास कहते हैं कि उचित और अनुचित को जानने वाले विद्वान् ही इस रघुवंश महाकाव्य को सुनने के योग्य हैं, क्योंकि स्वर्ण की शुद्धता अथवा दोष युक्तता का परीक्षण अग्नि में डालने से ही होता है। अतः विद्वानों को चाहिये कि मेरे काव्य का श्रवण करें तथा उसके गुण दोष का परीक्षण करके मुझे और मेरी कृति को कृतार्थ करें।

6.4 शब्दावली

सम्पृक्तौ	=	नित्य सम्बद्ध
वागर्थप्रतिपत्तये	=	शब्दार्थ के ज्ञान के लिए
उडुपेन	=	छोटी नाव से
तितीर्षुः	=	तैरने की इच्छा वाला
उपहास्यताम्	=	उपहास की पात्रता को
कवियशःप्रार्थी	=	कवि के यश को प्राप्त करने के इच्छुक
प्रांशुलभ्ये	=	उन्नत पुरुष द्वारा प्राप्त करने योग्य
पूर्वसूरिभिः	=	मेरे पूर्ववर्ती कवि वाल्मीकि
वज्रसमुत्कीर्णे	=	वज्र द्वारा छिद्र किये गये
आसमुद्रक्षितीशानाम्	=	समुद्रपर्यन्त पृथ्वी के स्वामी
यथाविधिहुताग्नीनाम्	=	विधि के अनुसार अग्नि में हवन करने वाले
मितभाषिणाम्	=	कम बोलने वाले
गृहमेधिनाम्	=	विवाह करने वाले
विजिगीषूणाम्	=	जीतने के इच्छा वाले
वार्धके	=	वृद्धावस्था में
तनुत्यजां	=	शरीर को छोड़ने वाले
तनुवाग्विभवोऽपि	=	वाणी के सामर्थ्य से रहित
प्रचोदितः	=	प्रेरित किया
हेम्नः	=	सोने की
अर्हन्ति	=	योग्य है
संलक्ष्यते	=	प्रतीत होती है

6.5 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1) रघुवंशमहाकाव्यम्, डॉ. कृष्णमणि त्रिपाठी, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, 2011।

2) रघुवंशम्, प्रो. हरि दामोदर वेलणकर, राष्ट्रिय संस्कृत संस्थानम्, नवदेहली, 2011।

3) कालिदास ग्रन्थावली, ब्रह्मानन्द त्रिपाठी, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, 2012।

4) संस्कृत साहित्य का इतिहास, आचार्य बलदेव उपाध्याय, शारदा निकेतन, कस्तूरबा नगर, सिगरा, वाराणसी, 2001।

5) वृत्तरत्नाकरः, आचार्य बलदेव उपाध्याय, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, 2011।

6) अमरकोश, चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, जवाहर नगर, बंगलो रोड़, दिल्ली, 2011।

7) संस्कृत साहित्य का इतिहास, वाचस्पति गैरोला, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी, 2009।

8) संस्कृत-वाङ्मय का बृहद् इतिहास, (चतुर्थ खण्ड), प्रो. राधावल्लभ त्रिपाठी, उत्तर प्रदेश संस्कृत संस्थान, लखनऊ, 1967।

9) संस्कृत साहित्य का समग्र इतिहास (1–4 खण्ड), प्रो. राधावल्लभ त्रिपाठी, न्यू भारतीय बुक कार्पोरेशन, नई दिल्ली, 2018।

6.6 बोध/अभ्यास प्रश्न के उत्तर

बोध प्रश्न–

1) (i) (क) नमस्कारात्मक (ii) (ख) वीर (iii) (ग) कौत्स

2) वस्तु वर्णन की दृष्टि से रघुवंश महाकाव्य के तीन खण्ड हैं– (i) रघुखण्ड (ii) रामखण्ड (iii) खिलखण्ड।

3) रघुवंशी राजाओं के पाँच गुण इस प्रकार हैं–

   i) जन्म से ही पवित्रता

   ii) फलप्राप्तिपर्यन्त उद्यमशीलता

   iii) समुद्रपर्यन्त पृथिवी का स्वामित्व

   iv) त्याग के लिये धन संचय

   v) सत्य के लिये मितभाषिता

अभ्यास प्रश्न–

इन प्रश्नों के उत्तर विद्यार्थी स्वयं लिखें।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 7 रघुवंशम् (प्रथम सर्ग) श्लोक 11-25

इकाई की रूपरेखा

7.0 उद्देश्य

7.1 प्रस्तावना

7.2 काव्यांश की व्याख्या

- 7.2.1 मनु का परिचय
- 7.2.2 दिलीप का जन्म
- 7.2.3 दिलीप का स्वरूप
- 7.2.4 दिलीप के गुण
- 7.2.5 दिलीप की कर-व्यवस्था
- 7.2.6 दिलीप का सैन्य बल
- 7.2.7 दिलीप के गुण

7.3 सारांश

7.4 शब्दावली

7.5 कुछ उपयोगी पुस्तकें

7.6 बोध/अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

7.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन से आप –

- रघुवंश के आदि राजा मनु का परिचय प्राप्त कर सकेंगे।
- राजा दिलीप के प्रभाव को जान सकेंगे।
- कालिदास के वर्णन वैशिष्ट्य से परिचित हो सकेंगे।
- प्राचीन राजाओं के गुणों से परिचित हो सकेंगे।
- अनेक सन्धियों और समासों को जान सकेंगे।

7.1 प्रस्तावना

पूर्व इकाई में आपने रघुवंश महाकाव्य के प्रारम्भिक दस श्लोकों का अध्ययन किया और यह जाना कि किसी भी कार्य के आरम्भ में प्रथमतः मंगलाचरण की परम्परा का निर्वाह करना चाहिये। हमें अपने ज्ञान और बल पर कभी अहंकार नहीं करना चाहिये। कालिदास ने काव्य रचना का महान् सामर्थ्य होने के बाद भी अपनी विनम्रता को द्योतित किया है। कालिदास महान् काव्य-प्रतिभा के कवि हैं, तथापि अपने वर्ण्यविषय की महत्ता को संकेतित करते हुये वे कहते हैं कि मैं मूर्ख हूँ और कवि के यश को प्राप्त करने का इच्छुक हूँ। अतः मैं उन्नत पुरुष के द्वारा प्राप्त करने योग्य फल की ओर लोभ से ऊपर हाथ उठाये हुए बौने व्यक्ति के समान उपहास का पात्र बनूँगा।

कालिदास अपने कृतित्व का श्रेय स्वयं न लेते हुये उसे अपने पूर्ववर्ती वाल्मीकि आदि कवियों को देते हैं और कहते हैं कि सूर्यवंश पर रामायण आदिकाव्य लिखकर वाल्मीकि आदि

कवियों ने मेरे लिये वाणी का द्वार पहले ही खोल दिया है। अतः मेरे लिये सूर्यवंश में प्रविष्ट होना तथा उसका वर्णन करना उसी प्रकार सरल हो गया है, जिस प्रकार वज्र से छेदे गये मणि में सूत्र सरलता से प्रविष्ट हो जाता है।

इस इकाई में आप रघुवंश महाकाव्य के प्रथम सर्ग के 11 से 25 श्लोक तक का अध्ययन करेंगे। इन पन्द्रह श्लोकों में कालिदास ने वैवस्वत मनु तथा महाराज दिलीप का वर्णन किया है। दिलीप महान् तेजस्वी और प्रजावत्सल राजा थे। उन्होंने गुरु वसिष्ठ के आश्रम में रहकर कामधेनु की पुत्री नन्दिनी की सेवा की थी तथा उसकी रक्षा के लिये सिंह के सम्मुख अपने को मांस के टुकड़े के समान समर्पित कर दिया था। कालिदास ने उनके वक्षस्थल की विशालता, उन्नत गात्रता तथा विशाल भुजाओं का वर्णन करते हुये उन्हें साक्षात् पराक्रम की संज्ञा दी है। दिलीप महान् शक्तिशाली थे। अपने आकार के समान उनकी प्रज्ञा थी। प्रज्ञा के अनुसार उनका आगम था। आगम के समान ही वे कार्यारम्भ करते थे तथा आरम्भ के समान ही फल प्राप्ति होती थी। वह एक साथ भयंकर और कान्त दोनों थे। कालिदास राजा में दोनों प्रकार के गुणों के पक्षधर हैं। शत्रुओं से सामना होने पर उन्हें भयंकर होना पड़ता है तथा प्रजा के प्रति उन्हें वात्सल्य की भावना भी रखनी होती है। रघुवंशी राजाओं की कर-व्यवस्था का उल्लेख करते हुये कालिदास ने कहा है कि वे राजा प्रजा के कल्याण के लिये ही उनसे कर लेते थे। जिस प्रकार सूर्य समुद्रादि से जल लेकर उसे हजार गुना करके बरसाता है। उसी प्रकार राजा दिलीप अपनी प्रजा से कर लेकर उसे सहस्त्र गुणित करके प्रजा के कल्याण में व्यय करते थे। कालिदास युद्ध के विरोधी थे। अतः अपने राजनायकों को उन्होंने शास्त्रों से ही कार्य करने वाला बताया है। उनके धनुष का प्रभाव मात्र ही उनकी विजय का कारण बनता था। राजा दिलीप के अनेक राजोचित गुणों का वर्णन भी आप यहाँ पढ़ेंगे।

इस प्रकार इस इकाई में आप कालिदास के द्वारा वर्णित राजा दिलीप के कुछ गुणों का अध्ययन कर सकेंगे। जिससे आप उन राजगुणों की सार्वकालिकता तथा सार्वभौमिकता का भी आकलन कर सकेंगे।

7.2 काव्यांश की व्याख्या

7.2.1 मनु का परिचय

वैवस्वतो मनुर्नाम माननीयो मनीषिणाम्।
आसीन्महीक्षितामाद्यः प्रणवश्छन्दसामिव।।11।।

प्रसंग – प्रस्तुत श्लोक में महाकवि कालिदास ने महाराज मनु का परिचय देते हुये उन्हें राजाओं में प्रथम तथा वेदों में ओंकार की तरह बताया है।

अन्वयः – मनीषिणां माननीयः वैवस्वतः नाम मनुः छन्दसां प्रणवः इव महीक्षिताम् आद्यः आसीत्।

शब्दार्थ – मनीषिणाम् = विद्वानों के, माननीयः = पूज्य, छन्दसाम् = वेदों के, प्रणवः इव = ओंकार के समान, महीक्षिताम् = पृथ्वी के राजाओं में, आद्यः = सर्वप्रथम, वैवस्वतः नाम = वैवस्वत नाम के सूर्य के पुत्र, मनुः = प्रथम मनु, आसीत् = थे।

अनुवाद – जिस प्रकार वेदों में सर्वप्रथम ओंकार होता है। उसी प्रकार राजाओं में सर्वप्रथम विद्वानों के पूजनीय सूर्य के पुत्र वैवस्वत नाम के मनु हुए।

सन्धि –

आसीन्महीक्षिताम् – आसीत् + महीक्षिताम् (अनुनासिक सन्धि)

प्रणवश्छन्दसामिव – प्रणवः + छन्दसामिव (श्चुत्व सन्धि)

समास –

मनीषिणाम् – मनसः इषिणः मनीषिणः तेषाम् मनीषिणाम् (तत्पुरुष समास)

महीक्षिताम् – महीं क्षियन्ति इति महीक्षितः तेषाम् महीक्षिताम् (उपपद समास)

विशेष – महाकवि कालिदास दस श्लोकों में रघुवंश के राजाओं का गुणानुवर्णन करने के अनन्तर इस श्लोक से उनकी वंश परम्परा का वर्णन प्रारम्भ करते हैं। महाराज मनु साक्षात् सूर्य के पुत्र थे। सूर्य का एक नाम विवस्वान् है। विवस्वान् का पुत्र होने के कारण मनु को वैवस्वत कहा गया। इनकी चर्चा अनेक पुराणों में भी हुई है। कालिदास ने उन्हें ओंकार के समान आदरणीय और सर्वव्यापक बताया है।

7.2.2 दिलीप का जन्म

तदन्वये शुद्धिमति प्रसूतः शुद्धिमत्तरः।
दिलीप इति राजेन्दुरिन्दुः क्षीरनिधाविव।।12।।

प्रसंग – प्रस्तुत श्लोक में कालिदास ने महाराज मनु के पुत्र दिलीप के जन्म का वर्णन किया है।

अन्वयः – शुद्धिमति तदन्वये शुद्धिमत्तरः दिलीप इति राजेन्दुः क्षीरनिधौ इन्दुः इव प्रसूतः।

शब्दार्थ – शुद्धिमति = शुद्धता से युक्त, तदन्वये = उस मनु के वंश में, शुद्धिमत्तरः = अत्यन्त शुद्ध चरित्र वाले, दिलीप इति = दिलीप नामक, राजेन्दुः = राजाओं में श्रेष्ठ, क्षीरनिधौ = क्षीरसागर में, इन्दुः इव = चन्द्रमा के समान, प्रसूतः = उत्पन्न हुआ।

अनुवाद – सूर्य के पुत्र उस मनु के अत्यन्त शुद्ध वंश में क्षीरसागर में चन्द्रमा के समान राजाओं में श्रेष्ठ परम पवित्र दिलीप नामक राजा हुआ।

सन्धि –

राजेन्दुरिन्दुः – राजेन्दुः + इन्दुः (विसर्ग सन्धि)

क्षीरनिधाविव – क्षीरनिधौ + इव (अयादि सन्धि)

समास –

तदन्वये – तस्य अन्वयः तदन्वयः, तस्मिन् तदन्वये (तत्पुरुष समास)

राजेन्दुः – राजा इन्दुः इव राजेन्दुः (मयूरव्यंसकादि समास)

क्षीरनिधौ – क्षीरस्य निधिः क्षीरनिधिः, तस्मिन् (तत्पुरुष समास)

विशेष – रघुवंश महाकाव्य में चर्चित राजाओं में महाराज दिलीप का स्थान सर्वोच्च है। उन्होंने प्रजा के पालन तथा धर्म की रक्षा के लिये सदैव कार्य किया। उनकी पत्नी का नाम सुदक्षिणा था तथा उनके रघु नामक अत्यन्त प्रतापी पुत्र उत्पन्न हुआ। जिसके नाम पर इस महाकाव्य का नाम रघुवंश रखा गया है।

7.2.3 दिलीप का स्वरूप

व्यूढोरस्को वृषस्कन्धः शालप्रांशुर्महाभुजः।
आत्मकर्मक्षमं देहं क्षात्रो धर्म इवाश्रितः।।13।।

प्रसंग – प्रस्तुत श्लोक में महाकवि कालिदास ने मनु के वंश में जन्मे राजा दिलीप के स्वरूप का वर्णन किया है।

अन्वयः – व्यूढोरस्कः वृषस्कन्धः शालप्रांशुः महाभुजः (सः) आत्मकर्मक्षमं देहम् आश्रितः क्षात्रः धर्म इव (स्थितः)।

शब्दार्थ – व्यूढोरस्कः = विशाल वक्षस्थल वाले, वृषस्कन्धः = वृषभ के स्कन्ध के समान स्कन्ध वाले, शालप्रांशुः = शाल वृक्ष के समान उन्नत, महाभुजः = बड़ी भुजाओं वाले, आत्मकर्मक्षमम् = अपने कार्यों को करने में समर्थ, देहम् = शरीर को, आश्रितः = धारण किये हुए, क्षात्रः = क्षत्रियसम्बन्धी, धर्मः = पराक्रम के, इव = समान।

अनुवाद – महाराज दिलीप का वक्षस्थल अत्यधिक चौड़ा था। उनके स्कन्ध वृषभ के स्कन्ध के समान ऊँचे और मजबूत थे। वे शालवृक्ष के समान उन्नत थे तथा उनकी भुजायें अत्यन्त दीर्घ थीं। वे अपने कार्यों के सम्पादन में समर्थ शरीर को धारण करते थे। जिससे ऐसा प्रतीत होता था मानो राजा दिलीप मूर्तिमान् क्षत्रिय धर्म हैं।

सन्धि –

इवाश्रितः – इव + आश्रितः (दीर्घ सन्धि)

समास –

व्यूढोरस्कः	–	व्यूढम् उरः यस्य सः व्यूढोरस्कः (बहुव्रीहि समास)
वृषस्कन्धः	–	वृषस्य स्कन्ध इव स्कन्धः यस्य सः वृषस्कन्धः (बहुव्रीहि समास)
शालप्रांशुः	–	शाल इव प्रांशुः शालप्रांशुः (कर्मधारय समास)
महाभुजः	–	महान्तौ भुजौ यस्य सः (बहुव्रीहि समास)
आत्मकर्मक्षमम्	–	आत्मनः कर्म इति आत्मकर्म, आत्मकर्मणि क्षमम्, आत्मकर्मक्षमम् (तत्पुरुष समास)

विशेष – शास्त्रों में किसी भी महापुरुष के स्कन्ध का वर्णन वृषभ के स्कन्ध की उपमा देकर किया जाता है। वृषभ अपने स्कन्ध पर समस्त भार को धारण कर लेता है। राजा दिलीप का स्कन्ध वृषभ के स्कन्ध के समान है। अतः वह समस्त प्रजा के भार को धारण करने में समर्थ हैं। इसी प्रकार उनकी ऊँचाई की तुलना शाल वृक्ष से की गई है। भुजाओं को जानुपर्यन्त लम्बमान् निरूपित किया गया है। यह शास्त्रीय स्वरूप उनकी वीरता तथा प्रजाजनों को धारण करने की क्षमता को द्योतित करता है।

सर्वातिरिक्तसारेण सर्वतेजोऽभिभाविना।
स्थितः सर्वोन्नतेनोर्वीं क्रान्त्वा मेरुरिवात्मना।।14।।

प्रसंग – प्रस्तुत श्लोक में कालिदास ने राजा दिलीप की सर्वव्यापकता का वर्णन किया है।

अन्वयः – सर्वातिरिक्तसारेण सर्वतेजोऽभिभाविना सर्वोन्नतेन आत्मना मेरुः इव उर्वीं क्रान्त्वा स्थितः।

शब्दार्थ – सर्वातिरिक्तसारेण = सभी प्राणियों से अधिक बल वाले, सर्वतेजोभिभाविना = सभी लोगों को अपने तेज से तिरस्कृत करने वाले, सर्वोन्नतेन = सबसे ऊँचे, आत्मना = अपने शरीर से, मेरुः इव = सुमेरु पर्वत के समान, ऊर्वीम् = पृथ्वी को, क्रान्त्वा = व्याप्तकर, स्थितः = विद्यमान है।

अनुवाद – जिस प्रकार सुमेरु पर्वत ने अपनी दृढ़ता, कान्ति तथा ऊँचाई से संसार के सभी दृढ़, कान्तियुक्त तथा ऊँचे पदार्थों को तिरस्कृत करके अपने विस्तार से सम्पूर्ण पृथ्वी को व्याप्त कर लिया है। उसी प्रकार राजा दिलीप ने अपने पराक्रम, तेज और विशाल व्यापक शरीर से सबको तिरस्कृत करते हुये समस्त पृथ्वी मण्डल को अपने अधीन कर लिया था।

सन्धि –

सर्वोन्नतेनोर्वीम्	– सर्वोन्नतेन + ऊर्वीम् (गुण सन्धि)
मेरुरिव	– मेरुः + इव (विसर्ग सन्धि)
इवात्मना	– इव + आत्मना (दीर्घ सन्धि)

समास –

सर्वातिरिक्तसारेण	– सर्वेभ्यः अतिरिक्तः सारः यस्य सः सर्वातिरिक्तसारः तेन सर्वातिरिक्तसारेण, (बहुव्रीहि समास)
सर्वतेजोभिभाविना	– सर्वान् तेजसा अभिभवतीति इति सर्वतेजोऽभिभावी, तेन सर्वतेजोऽभिभाविना (तत्पुरुष समास)
सर्वोन्नतेन	– सर्वेभ्यः उन्नतः सर्वोन्नतः तेन सर्वोन्नतेन (तत्पुरुष समास)

विशेष – यहाँ राजा दिलीप के पराक्रम और प्रभाव को सुमेरु पर्वत के समान बताया गया है। सुमेरु पर्वत अपने गुणों के कारण समस्त पदार्थों को तिरस्कृत करके समग्र पृथ्वी में अपने एकाधिपत्य को स्थापित किये हुये है। उसी प्रकार राजा दिलीप ने अपने गुणों के कारण अन्य समस्त राजाओं को तिरस्कृत करके समग्र पृथ्वी में अपना एकाधिपत्य या चक्रवर्तित्व स्थापित किया।

आकारसदृशप्रज्ञः प्रज्ञया सदृशागमः।
आगमैः सदृशारम्भः आरम्भसदृशोदयः।।15।।

प्रसंग – प्रस्तुत श्लोक में महाकवि कालिदास ने महाराज दिलीप के आकार आदि का वर्णन किया है।

अन्वयः – (स दिलीपः) आकारसदृशप्रज्ञः प्रज्ञया सदृशागमः आगमैः सदृशारम्भः आरम्भसदृशोदयः (आसीत्)।

शब्दार्थ – आकारसदृशप्रज्ञः = आकृति के अनुरूप बुद्धि वाले, प्रज्ञया = बुद्धि के समान, सदृशागम = शास्त्र को अभ्यास करने वाले, आगमैः = शास्त्रों के अनुसार से, सदृशारम्भः = आरम्भ करने वाले, आरम्भसदृशोदयः = आरम्भ के अनुसार फल को प्राप्त करने वाले।

अनुवाद – महाराज दिलीप जिस प्रकार विशालकाय और सुन्दर आकार वाले थे वैसी ही आकार के समान उनकी बुद्धि थी। जैसी तीक्ष्ण उनकी बुद्धि थी वैसे ही वे शास्त्राभ्यास करने वाले थे। वे जैसा शास्त्राभ्यास करते थे या शास्त्रों से सीखते थे वैसे ही शास्त्रानुकूल कार्य

सम्पन्न करते थे। वे जैसे शास्त्रानुकूल कार्य सम्पन्न करते थे उसी प्रकार की सफलता प्राप्त करते थे।

सन्धि –

सदृशागमः – सदृश + आगमः (दीर्घ सन्धि)

सदृशारम्भः – सदृश + आरम्भः (दीर्घ सन्धि)

सदृशोदयः – सदृश + उदयः (गुण सन्धि)

समास –

आकारसदृशप्रज्ञः – आकारेण सदृशी प्रज्ञा यस्य सः आकारसदृशप्रज्ञः (बहुव्रीहि समास)

सदृशागमः – सदृशः आगमः यस्य सः, सदृशागमः (बहुव्रीहि समास)

आरम्भसदृशोदयः – आरभ्यते इति आरम्भः, आरम्भेण सदृशः उदयः यस्य सः आरम्भसदृशोदयः (बहुव्रीहि समास)

विशेष – कालिदास ने इस पद्य में राजा दिलीप के आकार, बुद्धि, शास्त्राभ्यास, आरम्भ तथा फल प्राप्ति में एकरूपता दिखाई है।

7.2.4 दिलीप के गुण

भीमकान्तैर्नृपगुणैः स बभूवोपजीविनाम्।
अधृष्यश्चाभिगम्यश्च यादोरत्नैरिवार्णवः।।16।।

प्रसंग – प्रस्तुत श्लोक में कालिदास ने महाराज दिलीप के भयंकर और कोमल गुणों का समन्वय स्थापित किया है।

अन्वयः – भीमकान्तैः नृपगुणैः च स उपजीविनां यादोरत्नैः अर्णव इव अधृष्यः अभिगम्यः च बभूव।

शब्दार्थ – भीमकान्तैः = भयंकर और सुन्दर, नृपगुणैः = राजाओं के लिये अपेक्षित गुणों से, सः = वह राजा दिलीप, उपजीविनाम् = आश्रित लोगों के लिये, यादोरत्नैः = जलजन्तु और रत्नों से, अर्णवः इव = समुद्र के समान, अधृष्यः = अभिभव के अयोग्य, अभिगम्यश्च = आश्रयदाता, बभूव = हुए।

अनुवाद – राजा दिलीप तेज और प्रताप आदि भयंकर तथा दया-दाक्षिण्य आदि मनोहर दोनों प्रकार के राजगुणों को धारण करते थे। अतः राजा दिलीप आश्रित जनों के लिये उसी प्रकार अधृष्य आश्रयदाता थे जिस प्रकार मगरमच्छ आदि जलजन्तुओं और विभिन्न प्रकार के रत्नों के कारण समुद्र अधृष्य आश्रयस्थली बना रहता है। अर्थात् मगरमच्छ आदि से डरकर लोग समुद्र से दूर भी भागते हैं तथा रत्नों को प्राप्त करने के लिये उसके पास भी आते हैं।

सन्धि –

भीमकान्तैर्नृपगुणै – भीमकान्तैः + नृपगुणैः (विसर्ग सन्धि)

बभूवोपजीविनाम् – बभूव + उपजीविनाम् (गुण सन्धि)

अधृष्यश्च – अधृष्यः + च (श्चुत्व सन्धि)

अभिगम्यश्च – अभिगम्यः + च (श्चुत्व सन्धि)

चाभिगम्यः – च + अभिगम्यः (दीर्घ सन्धि)

यादोरत्नैरिवार्णवः – यादोरत्नैः + इवार्णवः (विसर्ग सन्धि)

इवार्णवः – इव + अर्णवः (दीर्घ सन्धि)

समास–

भीमकान्तैः – भीमाश्च कान्ताश्च भीमकान्ताः, तैः भीमकान्तैः (द्वन्द्व समास)

नृपगुणैः – नृपाणाम् गुणाः तैः नृपगुणैः (तत्पुरुष समास)

उपजीविनाम् – उपजीवन्ति इति उपजीविनः तेषाम् उपजीविनाम् (उपपद समास)

यादोरत्नैः – यादांसि च रत्नानि च यादोरत्नानि तैः यादोरत्नैः (द्वन्द्व समास)

विशेष – महाकवि कालिदास ने राजा दिलीप की कठोरता और कोमलता का समन्वय करते हुये उन्हें कभी तिरस्कृत न किये जाने योग्य निरूपित किया है।

रेखामात्रमपि क्षुण्णादामनोर्वर्त्मनः परम्।
न व्यतीयुः प्रजास्तस्य नियन्तुर्नेमिवृत्तयः।।17।।

प्रसंग – प्रस्तुत पद्य में कालिदास ने दिलीप के राज्य में प्रजाजनों द्वारा मनु के द्वारा निर्धारित नियमों के उल्लंघन न करने का वर्णन किया है।

अन्वयः – नियन्तुः तस्य नेमिवृत्तयः प्रजाः आमनोः क्षुण्णात् वर्त्मनः रेखामात्रमपि न व्यतीयुः।

शब्दार्थ – नियन्तुः = नियामक, तस्य = उस राजा दिलीप के, नेमिवृत्तयः = चक्र के पहिये के समान व्यापार वाले, प्रजाः = प्रजाजनों ने, आमनोः = मनु से लेकर, क्षुण्णाद् = अभ्यस्त किए गये, वर्त्मनः = आचार पर अर्थात् नियम पर अथवा मार्ग पर, परम् = अधिक, रेखामात्रम् = थोड़ा भी, न = नहीं, व्यतीयुः = उल्लंघन किये।

अनुवाद – जिस प्रकार चतुर सारथी के द्वारा चलाये गये रथ के पहिये मार्ग से रंच मात्र भी इधर-उधर नहीं हो पाते। उसी प्रकार सुयोग्य शासक राजा दिलीप के द्वारा शासित प्रजा किंचित् मात्र भी मनु के द्वारा निर्धारित नियमों का उल्लंघन नहीं करती थी।

सन्धि –

क्षुण्णादामनोः – क्षुणात् + आमनोः (जश्त्व सन्धि)

आमनोर्वर्त्मनः – आमनोः + वर्त्मनः (विसर्ग सन्धि)

प्रजास्तस्य – प्रजाः + तस्य (विसर्ग सन्धि)

नियन्तुर्नेमिवृत्तयः – नियन्तुः + नेमिवृत्तयः (विसर्ग सन्धि)

समास–

आमनोः – मनुम् आरभ्य (तत्पुरुष समास)

नेमिवृत्तयः – नेमीनां वृत्तिः इव वृत्तिः यासां ताः नेमिवृत्तयः
(कर्मधारयगर्भ बहुव्रीहि समास)

विशेष – कालिदास ने दिलीप की शासन की योग्यता का वर्णन करते हुये उन्हें चतुर सारथी के रूप में निरूपित किया है। चतुर सारथी द्वारा संचालित रथ के पहिये मार्ग से

किंचित् मात्र भी इधर-उधर नहीं होते। इसी प्रकार मनु के द्वारा राजा और प्रजा के लिये निर्धारित नियमों का उल्लंघन दिलीप के राज्य में प्रजाजनों द्वारा नहीं किया जाता था।

7.2.5 दिलीप की कर-व्यवस्था

प्रजानामेव भूत्यर्थं स ताभ्यो बलिमग्रहीत्।
सहस्त्रगुणमुत्स्रष्टुमादत्ते हि रसं रविः।।18।।

प्रसंग — प्रस्तुत पद्य में कालिदास ने राजा दिलीप की कर-व्यवस्था का उल्लेख किया है।

अन्वयः — स प्रजानाम् एव भूत्यर्थं ताभ्यः बलिम् अग्रहीत्, हि रविः सहस्त्रगुणम् उत्स्रष्टुं रसम् आदत्ते।

शब्दार्थ — सः = वह राजा दिलीप, प्रजानाम् = प्रजाओं के, भूत्यर्थम् = कल्याण के लिए, एव = ही, ताभ्यः = उन प्रजाओं से, बलिम् = कर को, अग्रहीत् = लेता था, हि = जैसे, रविः = सूर्य, सहस्त्रगुणम् = हजार गुना, उत्स्रष्टुम् = देने के लिए, रसम् = जल को, आदत्ते = लेता है।

अनुवाद — वह राजा दिलीप प्रजाओं के कल्याण के लिए ही उनसे कर लेता था, जैसे सूर्य हजार गुना अधिक देने के लिए ही समुद्र आदि से जल को ग्रहण करता है।

सन्धि —

भूत्यर्थम् — भूति + अर्थम् (यण् सन्धि)

समास—

भूत्यर्थम् — भूत्यै इदं भूत्यर्थम् (तत्पुरुष समास)

सहस्त्रगुणम् — सहस्त्रम् गुणाः यस्मिन् कर्मणि, तत् सहस्त्रगुणम् (बहुव्रीहि समास)

विशेष — प्रस्तुत श्लोक में कालिदास ने राजा दिलीप द्वारा निर्धारित कर व्यवस्था का उल्लेख किया है। उनका यह उल्लेख प्राचीन भारतीय राजाओं द्वारा कर निर्धारण के नियमों का भी संकेत करता है। कौटिल्य ने कहा है कि राजा को प्रजा के कल्याण के लिये कर लेना चाहिये। कालिदास सूर्य से दिलीप की तुलना करते हुये करग्रहण की बात करते हैं। जिस प्रकार सूर्य समुद्र आदि से जल लेकर उसे हजारों गुना अधिक करके वृष्टि करता है। उसी प्रकार दिलीप प्रजा द्वारा कर लेकर उससे अधिक उनके कल्याण के कार्यों में व्यय करता था।

7.2.6 दिलीप का सैन्य बल

सेना परिच्छदस्तस्य द्वयमेवार्थसाधनम्।
शास्त्रेष्वकुण्ठिता बुद्धिर्मौर्वी धनुषि चातता।।19।।

प्रसंग — प्रस्तुत पद्य में कालिदास ने महाराज दिलीप के प्रभाव का वर्णन किया है।

अन्वयः — तस्य सेना परिच्छदः (बभूव)। अर्थसाधनं द्वयम् एव (आसीत्)। शास्त्रेषु अकुण्ठिता बुद्धिः, धनुषि आतता मौर्वी च।

शब्दार्थ — तस्य = उस राजा दिलीप की, सेना = सेना, परिच्छदः = छत्रचामर आदि उपकरण के समान शोभा मात्र, बभूव = थी, अर्थसाधनम् = प्रयोजन के साधक, द्वयमेव =

दो ही थे, शास्त्रेषु = शास्त्र आदि में, अकुण्ठिता = अव्याहत, बुद्धि = मति, धनुषि = धनुष में, आतता = आरोपित, मौर्वी = प्रत्यंचा।

अनुवाद– उस राजा दिलीप की सेना तो छत्र चामर आदि के समान शोभा को बढ़ाने वाली मात्र थी उसके प्रयोजन तो दो से ही सिद्ध हो जाते थे – एक तो सम्पूर्ण शास्त्रों में अप्रतिहत बुद्धि और दूसरी धनुष पर चढ़ी हुई प्रत्यंचा।

सन्धि –

परिच्छदस्तस्य – परिच्छदः + तस्य (विसर्ग सन्धि)

शास्त्रेष्वकुण्ठिता – शास्त्रेषु + अकुण्ठिता (यण् सन्धि)

चातता – च + आतता (दीर्घ सन्धि)

समास –

अर्थसाधनम् – अर्थस्य साधनम् अर्थसाधनम् (तत्पुरुष समास)

अकुण्ठिता – न कुण्ठिता अकुण्ठिता (नञ् तत्पुरुष समास)

विशेष – प्रस्तुत श्लोक में कालिदास ने राजा दिलीप के प्रभाव का वर्णन किया है। उन्होंने यह स्पष्ट किया है कि राजा दिलीप का सैन्य संग्रह अतीव विशाल था। अनेक दुर्धर्श वीर उनकी सेना में थे किन्तु वे बार-बार सेना का प्रयोग करके किसी पर आक्रमण नहीं करते थे। उनकी प्रत्यंचा तथा शास्त्रों के अध्ययन से प्राप्त बुद्धि का इतना प्रभाव था कि समस्त कार्य उन्हीं के माध्यम से सिद्ध हो जाते थे। उनके धनुष के प्रभाव को सुनकर शत्रु स्वयं भयभीत हो जाते थे तथा शास्त्रज्ञान से प्राप्त उनकी राजनीति के सामने भी शत्रु स्वयं नतमस्तक रहते थे। अतः सेना के प्रयोग का अवसर ही नहीं होता था। यह सेना एक मात्र उनके लिये शोभा का साधन थी।

तस्य संवृतमन्त्रस्य गूढाकारेङ्गितस्य च।
फलानुमेयाः प्रारम्भाः संस्कारा प्राक्तना इव।।20।।

प्रसंग – प्रस्तुत श्लोक में कालिदास ने महाराज दिलीप के राजनीतिक चातुर्य का वर्णन किया है।

अन्वयः – संवृतमन्त्रस्य गूढाकारेङ्गितस्य च तस्य प्रारम्भाः प्राक्तनाः संस्काराः इव फलानुमेयाः (आसन्)।

शब्दार्थ – संवृतमन्त्रस्य = मन्त्रणा को गुप्त रखने वाले, गूढाकारेङ्गितस्य = अप्रकाशित चेष्टाओं और आकार वाले, तस्य = उस राजा दिलीप के, प्रारम्भाः = कार्य, प्राक्तनाः = पूर्वजन्म के, संस्काराः = संस्कार के समान, इव = यथा, फलेन = कार्यों से, अनुमेयाः = जानने योग्य।

अनुवाद – राजा दिलीप अपनी सभी प्रकार की मन्त्रणाओं को गुप्त रखते थे तथा अपने बाहर और भीतर के समस्त सुख और दुःख के चिह्नों को अपने आकार तथा संकेतों से प्रकट नहीं करते थे। जिस प्रकार पूर्वजन्म के संस्कार अपने फलों के द्वारा जाने जाते हैं। उसी प्रकार दिलीप के समस्त कार्यों का परिज्ञान कार्य सम्पन्न हो जाने तथा उनका परिणाम प्राप्त हो जाने के बाद ही होता था।

सन्धि –

गूढाकारेङ्गितस्य – गूढाकार + इङ्गितस्य (गुण सन्धि)

समास–

संवृतमन्त्रस्य – संवृतः मन्त्रः यस्य सः संवृतमन्त्रः तस्य संवृतमन्त्रस्य। (बहुव्रीहि समास)

गूढाकारेङ्गितस्य – आकारः च इङ्गितं च आकारेङ्गिते, गूढे आकारेङ्गिते यस्य सः गूढाकारेङ्गितः तस्य गूढाकारेङ्गितस्य (बहुव्रीहि समास)

फलानुमेयाः – फलेन अनुमेयाः फलानुमेयाः (तृतीया तत्पुरुष समास)

विशेष – कालिदास ने दिलीप की राजनीति और कूटनीति का संकेत करते हुये उन्हें ''संवृतमन्त्र'' कहा है। संवृतमन्त्र से उनका अभिप्राय गुप्त विचारों से है। राजा को अपनी मन्त्रणा को सदैव गुप्त रखना चाहिये। उन्हें कार्य सम्पन्न होने के बाद ही ज्ञात होना चाहिये। कालिदास दिलीप की संवृतमन्त्रता की पूर्वजन्मों के संस्कार से उपमा देते हैं। पूर्वजन्म के संस्कार अपने-अपने अवसर पर फलित होते हैं तथा फल के द्वारा उनका अनुमान किया जाता है। इसी प्रकार दिलीप के समस्त कार्य उनके आकार और संकेत से अनुमेय न होकर फल से अनुमेय थे।

7.2.7 दिलीप के गुण

जुगोपात्मानमत्रस्तो भेजे धर्ममनातुरः।
अगृध्नुराददे सोऽर्थमसक्तः सुखमन्वभूत्।।21।।

प्रसंग – प्रस्तुत श्लोक में महाकवि कालिदास ने आत्मरक्षा आदि के विषय में दिलीप के गुणों का वर्णन किया है।

अन्वयः – सः, अत्रस्तः, 'सन्' आत्मानं, जुगोप, अनातुरः, 'सन्' धर्मं, भेजे, अगृध्नुः, 'सन्' अर्थम्, आददे, असक्तः, 'सन्' सुखम्, अन्वभूत्।

शब्दार्थ – सः = राजा दिलीप, अत्रस्तः = निडर होकर, आत्मानम् = अपनी, जुगोप = रक्षा किया, अनातुरः = निरोग होकर, धर्मम् = धर्म की, भेजे = सेवा किया, अगृध्नुः = लोभ रहित, अर्थम् = धन, आददे = संग्रह किया, असक्तः = आसक्ति रहित होकर, सुखम् = सुख का, अन्वभूत् = भोग किया।

अनुवाद – उस राजा दिलीप ने निडर होकर अपनी आत्मरक्षा की। निरोग रहकर धर्म का सेवन किया। उसने लोभ रहित होकर धन का संग्रह किया और आसक्ति रहित होकर सांसारिक सुखों का भोग किया।

सन्धि –

जुगोपात्मानम् – जुगोप + आत्मानम् (दीर्घ सन्धि)।

अगृध्नुराददे – अगृध्नुः + आददे (विसर्ग सन्धि)।

अन्वभूत् – अनु + अभूत् (यण् सन्धि)

समास –

अत्रस्तः – न त्रस्तः, अत्रस्तः (नञ् तत्पुरुष समास)।

अनातुरः — न आतुरः, अनातुरः (नञ् तत्पुरुष समास)।

अगृध्नुः — न गृध्नुः, अगृध्नुः (नञ् तत्पुरुष समास)।

ज्ञाने मौनं क्षमा शक्तौ त्यागे श्लाघाविपर्ययः।

गुणा गुणानुबन्धित्वात्तस्य सप्रसवा इव।।22।।

प्रसंग — प्रस्तुत पद्य में भी कालिदास ने महाराज दिलीप के राजोचित गुणों का वर्णन किया है।

अन्वयः — ज्ञाने, मौनं, शक्तौ, क्षमा, त्यागे, श्लाघाविपर्ययः 'इत्थं' तस्य, गुणाः गुणानुबन्धित्वात्, सप्रसवाः, इव, 'अभूवन्'।

शब्दार्थ — ज्ञाने = दूसरों की बात को जानकर भी, मौनम् = मौन रहना, शक्तौ = शक्ति होने पर भी, क्षमा = क्षमा करना, त्यागे = दान देकर भी, श्लाघाविपर्ययः = आत्म प्रशंसा ना करना, तस्य = राजा दिलीप के, गुणाः = गुण, गुणानुबन्धित्वात् = विरुद्ध गुणों के सहचारी होकर भी, सप्रसवाः = सहोदरों के, इव = तरह थे।

अनुवाद — राजा दिलीप दूसरों की बात जानकर के भी चुप रहते थे। उसका अपप्रचार नहीं करते थे। उनमें शत्रु से बदला लेने का सामर्थ्य था तथापि वे उन शत्रुओं को क्षमा करते थे। दान देकर भी आत्मप्रशंसा नहीं करते थे। इस प्रकार राजा दिलीप के ज्ञान, शक्ति और त्याग आदि गुण मौन, क्षमा तथा आत्मप्रशंसा आदि विरुद्ध गुणों से युक्त होकर सगे भाई की तरह प्रतीत होते थे।

समास —

श्लाघाविपर्ययः — श्लाघायाः विपर्ययः (षष्ठी तत्पुरुष समास)।

गुणानुबन्धित्वात् — अनुबध्नन्ति इति अनुबन्धिनः, अनुबन्धिनां भावः अनुबन्धित्वम्, गुणः अनुबन्धित्वम्, गुणानुबन्धित्वम्, तस्मात् (तत्पुरुष समास)।

सप्रसवाः — सह प्रसवः येषाम् ते (बहुव्रीहि समास)।

विशेष — शास्त्रों में ज्ञान का गुण मौन, शक्ति का गुण क्षमा तथा दान का गुण आत्मप्रशंसा का अभाव कहा गया है। राजा दिलीप में ज्ञान के साथ मौन, शक्ति के साथ क्षमा तथा दान के साथ आत्मप्रशंसा का अभावरूप गुण विद्यमान थे। ज्ञान और मौन, शक्ति और क्षमा तथा दान और आत्मप्रशंसा का अभाव परस्पर विरुद्ध धर्म हैं। किन्तु राजा दिलीप में ये दोनों परस्पर विरुद्ध गुण सगे भाइयों की तरह बिना किसी विरोध के विद्यमान थे।

अनाकृष्टस्य विषयैर्विद्यानां पारदृश्वनः।
तस्य धर्मरतेरासीद् वृद्धत्वं जरसा विना।।23।।

प्रसंग — इस श्लोक में भी कवि कालिदास ने राजा दिलीप के गुणों का वर्णन किया है।

अन्वयः — विषयैः अनाकृष्टस्य, विद्यानां, पारदृश्वनः, धर्मरतेः, तस्य, जरसा विना, वृद्धत्वम्, आसीत्।

शब्दार्थ — विषयैः = सांसारिक भोगों से, अनाकृष्टस्य = दूर रहने वाले, विद्यानाम् = वेद-वेदांग आदि विद्याओं का, पारदृश्वनः = तत्त्ववेत्ता, धर्मरतेः = धर्मानुरागी, तस्य = उस दिलीप की, जरसा विना = वृद्धावस्था के बिना, वृद्धत्वम् = बुढ़ापा, आसीत् = था।

अनुवाद — राजा दिलीप सांसारिक भोगों से सर्वथा दूर रहते थे। वेद वेदांग आदि विद्याओं के तत्त्ववेत्ता थे। दिलीप धर्म में अत्यन्त अनुराग रखते थे। इस प्रकार वह राजा दिलीप वृद्धावस्था के बिना ही अपने गुणों के कारण वृद्ध जान पड़ते थे। अर्थात् अपने ज्ञान आदि गुणों के कारण उनका सम्मान वृद्धों के समान था।

सन्धि —

विषयैर्विद्यानाम् — विषयैः + विद्यानाम् (विसर्ग सन्धि)

धर्मरतेरासीद् — धर्मरतेः + आसीत् (विसर्ग सन्धि)

समास —

अनाकृष्टस्य — न आकृष्टः, अनाकृष्टः, तस्य (नञ् तत्पुरुष समास)

पारदृश्वनः — पारं दृष्ट्वान् इति पारदृश्वा, तस्य (तत्पुरुष समास)

धर्मरतेः — धर्मे रतिः यस्य सः, तस्य (बहुव्रीहि समास)

प्रजानां विनयाधानाद्रक्षणाद्भरणादपि।

स पिता पितरस्तासां केवलं जन्महेतवः।।24।।

प्रसंग — प्रस्तुत पद्य में महाकवि कालिदास ने राजा दिलीप के प्रजापालन आदि गुणों का वर्णन किया है।

अन्वयः — प्रजानां विनयाधानात् रक्षणात्, भरणात्, अपि, सः पिता 'अभूत्' तासां पितरः 'तु' केवलं जन्महेतवः ''अभूवन्''।

शब्दार्थ — प्रजानाम् = प्रजाजनों में, विनयाधानात् = शिक्षा द्वारा विनम्रता, सदाचार आदि गुणों का आधान करने के कारण, रक्षणात् = रक्षा करने के कारण, भरणात् = भरण-पोषण करने के कारण, अपि = भी, सः = राजा दिलीप, तासाम् = उन प्रजाजनों के, पितरः = पिता, केवलम् = केवल, जन्महेतवः = जन्म देने के कारण मात्र।

अनुवाद — राजा दिलीप अपने प्रजाजनों में शिक्षा द्वारा विनम्रता तथा सदाचार आदि गुणों का आधान करते थे। वे उन प्रजाजनों की रक्षा करते थे तथा भोजन आदि देकर उनका भरण-पोषण भी करते थे। इस प्रकार राजा दिलीप ही उन प्रजाजनों के पिता थे, उनके पिता केवल जन्म के हेतु मात्र थे। जन्म देने के कारण ही उन्हें पिता कहा जाता था।

सन्धि —

पितरस्तासाम् — पितरः + तासाम् (विसर्ग सन्धि)

समास —

प्रजानाम् — प्रकर्षेण जायन्ते इति प्रजाः, तासाम् (तत्पुरुष समास)

विनयाधानात् — विनयस्य आधानम्, विनयाधानम्, तस्मात् (तत्पुरुष समास)

जन्महेतवः — जन्मनः हेतवः (तत्पुरुष समास)

छन्द — पूर्ववत्।

लक्षणम् — पूर्ववत्।

स्थित्यै दण्डयतो दण्ड्यान्परिणेतुः प्रसूतये।

अप्यर्थकामौ तस्यास्तां धर्म एव मनीषिणः।।25।।

प्रसंग – प्रस्तुत पद्य में भी महाकवि कालिदास ने राजा दिलीप के दण्ड आदि व्यवस्था का वर्णन किया है।

अन्वयः – दण्ड्यान्, एव, स्थित्यै, दण्डयतः, प्रसूतये, परिणेतुः, मनीषिणः, तस्य, अर्थकामौ, अपि, धर्मः, एव, आस्ताम्।

शब्दार्थ – दण्ड्यान् = दण्ड देने योग्य, स्थित्यै = लोकमर्यादा की रक्षा के लिये, दण्डयतः = दण्ड देने वाले, प्रसूतये = सन्तान प्राप्ति के लिये, परिणेतुः = विवाह करने वाले, मनीषिणः = विद्वान्, तस्य = उस राजा दिलीप के, अर्थकामौ = अर्थ और काम, अपि = भी, धर्मः = धर्म, एव = ही, आस्ताम् = थे।

अनुवाद – राजा दिलीप अपराधियों को लोकमर्यादा की रक्षा के लिये अपराध के अनुरूप ही दण्ड देते थे। सन्तान प्राप्ति के लिये ही विवाह करते थे। इस प्रकार उस विद्वान् राजा दिलीप के अर्थ और काम पुरुषार्थ भी धर्म ही थे।

सन्धि –

अप्यर्थकामौ – अपि + अर्थकामौ (यण् सन्धि)

तस्यास्ताम् – तस्याः + ताम् (विसर्ग सन्धि)

समास –

अर्थकामौ – अर्थश्च कामश्च (द्वन्द्व समास)

बोध प्रश्न–

1. सूर्य के पुत्र कौन थे ?
2. दिलीप के पुत्र का क्या नाम था ?
3. दिलीप किस वंश में उत्पन्न हुये थे ?
4. 'सहस्त्रगुणमुत्स्रष्टुमादत्ते हि रसं रविः' सूक्ति वाक्य किस ग्रन्थ से सम्बन्धित है ?
5. कालिदास ने 'संवृतमन्त्र' विशेषण का प्रयोग किसके लिये किया है ?

अभ्यास प्रश्न –

1. 'सदसद्व्यक्तिहेतवः' से आप क्या समझते हैं ?
2. दिलीप के स्वरूप का वर्णन कीजिये ।
3. दिलीप की प्रज्ञा, आगम, आरम्भ और उदय कैसे थे ?
4. दिलीप अपने उपजीवियों के लिये किस प्रकार अधृष्य थे ?
5. दिलीप के राज्य में प्रजा कैसी थी ?
6. दिलीप की कर-व्यवस्था पर प्रकाश डालिये।
7. दिलीप के कार्यों का अनुमान कैसे किया जाता था ?
8. 'प्रजानां विनयाधान........' इत्यादि श्लोक की व्याख्या कीजिये ।

7.3 सारांश

इस इकाई के पन्द्रह श्लोकों में आपने महाराज दिलीप की राजव्यवस्था के बारे में अध्ययन किया। कालिदास के इस वर्णन से प्राचीन राजव्यवस्था पर भी प्रकाश डाला जा सकता है। उन्होंने सर्वप्रथम महाराज मनु का उल्लेख किया है। जिस प्रकार वेदों में सर्वप्रथम ओंकार होता है उसी प्रकार राजाओं में सर्वप्रथम विद्वानों के पूजनीय सूर्य के पुत्र वैवस्वत नाम के मनु हुए। सूर्य के पुत्र उस मनु के अत्यन्त शुद्ध वंश में, क्षीरसागर में चन्द्रमा के समान राजाओं में श्रेष्ठ परम पवित्र दिलीप नामक राजा हुआ। महाराज दिलीप का वक्षस्थल अत्यधिक चौड़ा था। उनके स्कन्ध वृषभ के स्कन्ध के समान ऊँचे और मजबूत थे। वे शालवृक्ष के समान उन्नत थे तथा उनकी भुजायें अत्यन्त दीर्घ थीं। वे अपने कार्यों के सम्पादन में समर्थ शरीर को धारण करते थे। जिससे ऐसा प्रतीत होता था मानो राजा दिलीप मूर्तिमान् क्षत्रियधर्म हैं। जिस प्रकार सुमेरु पर्वत ने अपनी दृढ़ता, कान्ति तथा ऊँचाई से संसार के सभी दृढ़, कान्तियुक्त तथा ऊँचे पदार्थों को तिरस्कृत करके अपने विस्तार से सम्पूर्ण पृथ्वी को व्याप्त कर लिया है उसी प्रकार राजा दिलीप ने अपने पराक्रम, तेज और विशाल व्यापक शरीर से सबको तिरस्कृत करते हुये समस्त पृथ्वीमण्डल को अपने अधीन कर लिया था। महाराज दिलीप जिस प्रकार विशालकाय और सुन्दर आकार वाले थे वैसी ही आकार के समान उनकी बुद्धि थी। जैसी तीक्ष्ण उनकी बुद्धि थी वैसे ही वे शास्त्राभ्यास करने वाले थे। वे जैसा शास्त्राभ्यास करते थे या शास्त्रों से सीखते थे वैसे ही शास्त्रानुकूल कार्य सम्पन्न करते थे। वे जैसे शास्त्रानुकूल कार्य सम्पन्न करते थे उसी प्रकार की सफलता प्राप्त करते थे।

कालिदास ने दिलीप के गुणों का उल्लेख करते हुये कहा है कि दिलीप तेज और प्रताप आदि भयंकर तथा दया, दाक्षिण्य आदि मनोहर, दोनों प्रकार के राजगुणों को धारण करते थे। अतः राजा दिलीप आश्रित जनों के लिये उसी प्रकार अधृष्य आश्रयदाता थे जिस प्रकार मगरमच्छ आदि जलजन्तुओं और विभिन्न प्रकार के रत्नों के कारण समुद्र अधृष्य आश्रयस्थली बना रहता है। अर्थात् मगरमच्छ आदि से डर कर लोग समुद्र से दूर भी भागते हैं तथा रत्नों को प्राप्त करने के लिये उसके पास भी आते हैं। जिस प्रकार चतुर सारथी के द्वारा चलाये गये रथ के पहिये मार्ग से रंच मात्र भी इधर-उधर नहीं हो पाते। उसी प्रकार सुयोग्य शासक राजा दिलीप के द्वारा शासित प्रजा किंचित् मात्र भी मनु के द्वारा निर्धारित नियमों का उल्लंघन नहीं करती थी।

कालिदास ने राजा दिलीप की कर-व्यवस्था का उल्लेख करते हुये कहा है कि दिलीप प्रजाओं के कल्याण के लिए ही उनसे कर लेते थे, जैसे सूर्य हजार गुना अधिक देने के लिए ही समुद्र आदि से जल को ग्रहण करता है। राजा दिलीप की सेना तो छत्र चामर आदि के समान शोभा को बढ़ाने वाली मात्र थी उसके प्रयोजन तो दो से ही सिद्ध हो जाते थे – एक तो सम्पूर्ण शास्त्रों में अप्रतिहत बुद्धि और दूसरी धनुष पर चढ़ी हुई प्रत्यंचा। राजा दिलीप अपनी सभी प्रकार की मन्त्रणाओं को गुप्त रखते थे तथा अपने बाहर और भीतर के समस्त सुख और दुःख के चिह्नों को अपने आकार तथा संकेतों से प्रकट नहीं करते थे। जिस प्रकार पूर्वजन्म के संस्कार अपने फलों के द्वारा जाने जाते हैं। उसी प्रकार दिलीप के समस्त कार्यों का परिज्ञान कार्य सम्पन्न हो जाने तथा उनका परिणाम प्राप्त हो जाने के बाद ही होता था। राजा दिलीप मौन क्षमा आदि अनेक गुणों से युक्त थे।

इस प्रकार इस इकाई में आपने दिलीप और उनकी राजव्यवस्था से सम्बन्धित पन्द्रह श्लोकों को पढ़ा तथा यह जाना कि प्राचीन भारतीय राजव्यवस्था अत्यन्त दृढ़ थी।

7.4 शब्दावली

छन्दसाम्	=	वेदों के
प्रणवः इव	=	ओंकार के समान
व्यूढोरस्कः	=	विशाल वक्षस्थल वाले
क्रान्त्वा	=	व्याप्तकर
ऊर्वीम्	=	पृथ्वी को
आगमैः	=	शास्त्रों के अनुसार से
सदृशागम	=	शास्त्र का अभ्यास करने वाले
भीमकान्तैः	=	भंयकर और सुन्दर
अभिगम्यश्च	=	आश्रयदाता
अधृष्यः	=	अभिभव के अयोग्य
आमनोः	=	मनु से लेकर
क्षुण्णाद्	=	अभ्यस्त किए गये
वर्त्मनः	=	आचार पर
व्यतीयुः	=	उल्लंघन किये
रसम्	=	जल को
आदत्ते	=	लेता है
अग्रहीत्	=	लेता था
आतता	=	आरोपित
मौर्वी	=	प्रत्यंचा
अकुण्ठिता	=	अव्याहत
फलेन	=	कार्यों से
अनुमेयाः	=	जानने योग्य
अगृध्नुः	=	लोभ रहित
सप्रसवाः	=	सहोदरों के
श्लाघाविपर्ययः	=	आत्म प्रशंसा ना करना
पारदृश्वनः	=	तत्त्ववेत्ता
विनयाधानात्	=	शिक्षा द्वारा विनम्रता

7.5 कुछ उपयोगी पुस्तकें

1) रघुवंशमहाकाव्यम्, डॉ. कृष्णमणि त्रिपाठी, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, 2011।

2) रघुवंशम्, प्रो. हरि दामोदर वेलणकर, राष्ट्रिय संस्कृत संस्थानम्, नवदेहली, 2011।

3) कालिदास ग्रन्थावली, ब्रह्मानन्द त्रिपाठी, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, 2012।

4) संस्कृत साहित्य का इतिहास, आचार्य बलदेव उपाध्याय, शारदा निकेतन, कस्तूरबा नगर, सिगरा, वाराणसी, 2001।

5) वृत्तरत्नाकरः, आचार्य बलदेव उपाध्याय, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, 2011।

6) अमरकोश, चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान, जवाहर नगर, बंगलो रोड़, दिल्ली, 2011।

7) संस्कृत साहित्य का इतिहास, वाचस्पति गैरोला, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी, 2009।

8) संस्कृत-वाङ्मय का बृहद् इतिहास, (चतुर्थ खण्ड), प्रो. राधावल्लभ त्रिपाठी, उत्तर प्रदेश संस्कृत संस्थान, लखनऊ, 1967।

9) संस्कृत साहित्य का समग्र इतिहास (1-4 खण्ड), प्रो. राधावल्लभ त्रिपाठी, न्यू भारतीय बुक कार्पोरेशन, नई दिल्ली, 2018।

7.6 बोध/अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न –

1) मनु।

2) रघु।

3) रघुवंश।

4) रघुवंश महाकाव्य।

5) राजा दिलीप।

अभ्यास प्रश्न–

इन प्रश्नों के उत्तर विद्यार्थी स्वयं लिखें।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

NOTES